सुभाषचन्द्र बोस

रमेशचन्द्र आर्य

श्री सुभाषचन्द्र बोस

का

* जीवन चरित्र ! *

लेखक :—

रमेशचन्द्र आर्य्य

स०, सम्पादक 'वीर अर्जुन'

सम्पादक:—

श्री पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति

प्रथमावृत्ति]   वसन्तपंचमी १९९४   [मूल्य ।=)

प्रकाशक :—
विजय पुस्तक भण्डार,
अर्जुन प्रेस के ऊपर,
देहली.

***

मुद्रक :—
अर्जुन प्रेस,
नया बाजार,
देहली.

भेंट

श्री मातृ-पितृ चरणों में!

—रमेश

* भूमिका *

गत वर्ष जाति ने पं० जवाहरलाल नेहरू को राष्ट्रपति के रूप में वरा था। इस वर्ष उसने बा० सुभाषचन्द्र के गले में जय-माल पहनाई है। पं० जवाहरलाल के विचारों की प्रगति तेज थी, तो सुभाष बाबू के विचारों को क्रान्तिमय कह सकते हैं। पं० जवाहरलाल जी दो वर्ष तक राष्ट्रपति रहे। इस प्रकार निरन्तर तीन वर्ष तक राष्ट्र ने राष्ट्रीय सेना के वाम-पार्श्व के सेनापतियों को राष्ट्रपति चुन कर यह बतला दिया है कि हवा का रुख़ किधर है। हवा का रुख़ बतलाता है कि देश क्रान्ति चाहता है। वह देर नहीं चाहता और नहीं स्वराज्य की कोई क़िश्त चाहता है। वह फौरन चाहता है और पूरा स्वराज्य चाहता है। सुभाष बाबू का राष्ट्रपति पद पर सुशोभित होना इस बात का प्रमाण है कि देश को उनकी शक्तियों पर अगाध विश्वास है। अगर ऐसा न होता तो जवाहरलाल के पीछे सुभाषचन्द्र को राष्ट्र की गद्दी न दी जाती।

जिस भारतमाता के सुपूत पर देश ने इतना विश्वास किया है, इतनी श्रद्धा दिखाई है उसका पूर्व जीवन जानने की इच्छा सभी को होगी। बा० सुभाषचन्द्र बोस का जो जीवन-वृत्तान्त इस पुस्तिका में जनता के सामने रखा जा रहा है, वह पूर्ण नहीं

है। उसे जीवन-चरित्र की एक रूप-रेखा ही कह सकते हैं। तो भी उसके पढ़ने से पाठकों के हृदय में पैदा होने वाली उत्सुकता का काफी अंश शांत हो जायगा। उन्हें मालूम हो जायगा कि सुभाष बाबू का अबतक का जीवन त्याग और बलिदान का जीवन रहा है। और उनके विचार समय से आगे रहे हैं। आज भी वह समय से आगे देख रहे हैं और आशा है कि भविष्य में भी कभी समय से पीछे न रहेंगे। भारत का स्वाधीनता-संग्राम उन्हें सदा लड़ाकुओं की अगली श्रेणी में पायगा।

—इन्द्र

दो शब्द !

सुभाष बाबू का जीवन एक विजयी लड़ाकू का जीवन रहा है। साथी, नेता, सरकार तथा इन सब से जबर्दस्त बीमारियों से आप सदा लड़ते ही रहे हैं और सभी पर विजय भी पाई है। ऐसे वीर पुरुष की जीवन-कथा लिखने का साहस मुझ-जैसा व्यक्ति हरगिज न कर सकता यदि मेरे ऊपर कुछ कृपालु हाथ न होते। श्रद्धेय पं० इन्द्र जी तो मेरे पथ-निर्माता ही हैं। साहित्यिक क्षेत्र भी मुझे उन्हीं की कृपा से मिला है। इस पुस्तक का सम्पादन-भार स्वीकार करके तो उन्होंने मुझे एक दम हलका-सा कर दिया है। आदरणीय मित्र पं० राजेश्वर जी वेदालंकार का सहयोग तो इसमें इतना है कि यदि उन्हें ही लेखक कह दूं तो अतिशयोक्ति नहीं। इनके अलावा सहृदय भाई पं० ओ३मप्रकाश जी शास्त्री, विद्याभास्कर के सौजन्य को भी भुलाना न चाहिये, जिससे मुझे साहस और उत्साह मिला है। अतः उपरोक्त महानुभावों का मैं हृदय से कृतज्ञ हूं और इसके लिए उन्हें धन्यवाद देता हूं।

पुस्तक जल्दी में जैसी-कुछ बन पड़ी है, सामने है। यदि इससे भारतीय युवकों के दिल में देशभक्ति के कुछ भी भाव भर सके तो परिश्रम सफल समझूंगा।

किशोर-सदन, धर्मपुरा
दिल्ली, २-२-३८

—रमेशचन्द्र आर्य्य

विषय-सूची

१—वह कौन !	१
२—बाल्यकाल	३
३—कर्म-पथ पर	७
४—मांडले की जेल	१२
५—कलकत्ता कांग्रेस	१८
६—बाधाओं के मुख में	२२
७—मेयर की कुर्सी पर	२८
८—दिल्ली-समझौते के बाद	३३
९—नज़रबन्द	३८
१०—भारत से बाहर	४४
११—पिता की मृत्यु और देश-निर्वासन	५२
१२—सुभाष-दिवस	६०
१३—बन्धन से मुक्ति	६५
१४—राष्ट्रपति के पद पर	७०

परिशिष्ट

१—राष्ट्र की विभिन्न समस्यायें	७८
२—युवकों से !	९२
३—सामयिक विचार	९६

वह कौन ?

वह युवक या तो देश को उबार देगा या उसे गहरे पानी में लेजाकर पटक देगा। राष्ट्र-नेताओं ने जिस वीर दलको खड़ा किया है, यह अधीर सेनापति-राष्ट्रपति या तो उसे तोड़ देगा या उसे अवस्थानुसार बदलकर माताका सिर ऊंचा कर देगा। वह बड़े जोर से उठ रहा है। उसने अपने विरोधियों को एक नहीं कई बार पटखनी दी है। उसने एक नहीं कई मैदानों में नौकरशाही से जंग किया, और सफलता प्राप्त की है। उसने इस छोटी-सी उम्र में अपनी ध्वजा पर विजय के कई निशान बांध लिये हैं।

वह जीवित शहीद है। मर कर शहीद तो बहुत होते हैं, परन्तु वह युवक तो जीवित दशा में ही शहीद हो गया है। उसकी

वीरता से सरकार थरथराती है, उसकी दृढ़ता से साथी चौंकते हैं और उसकी अनुपम संगठन शक्ति से विरोधी कांप उठते हैं।

उसका तपःकृश हुआ शरीर, गम्भीर चेहरा, आंखों की मस्ती और भाषण का माधुर्य बरबस अपनी तरफ खींच लेता है। वह जनता का दुलारा है। और उस का नाम है—सुभाषचन्द्र बोस !

(१)

बाल्यकाल

(बोस परिवार भारत के उन गिने-चुने परिवारों में से है, जो अपनी देशभक्ति के कारण आज देश में विशिष्ट स्थान रखते हैं।) नेहरू परिवार के मोती और जवाहर, पटेल परिवार के विट्ठल और वल्लभ, खान परिवार के अब्दुलगफ्फार और डा० खान की तरह ही आज बोस परिवार के शरत् और सुभाष की जोड़ी भारत के राष्ट्रीय आकाश में दमदमा रही है।

इनके बाप-दादों का असली घर तो चौबीस परगने के एक गांव कोंदालिया में है, लेकिन पिता रायबहादुर जानकीनाथ बोस कटक में सरकारी वकील थे। उनके ८ सन्तानें थीं, जिनमें

सुभाष बोस का जन्म सन् १८६७ ई० में हुआ। अपने भाइयों में इनका नम्बर छठा है। सब से बड़े बैरिस्टर सतीशचन्द्र बोस हैं। उनसे छोटे श्री शरतचन्द्र बोस तथा डा० सुनीलचन्द्र बोस एम० डी० ने देश में काफी ख्याति प्राप्त की है। रायबहादुर ने अपने पुत्रों की शिक्षा-दीक्षा में कोई कसर बाकी नहीं रक्खी और सब को उच्च शिक्षा दिलाने के लिये योरुप भेजा।

बालक सुभाष के स्वभाव पर माता बासन्तीदेवी का बहुत-कुछ प्रभाव पड़ा। वे अत्यन्त साध्वी और धार्मिक प्रवृत्ति की स्त्री हैं।

सुभाष बाबू ने कटक में ही पढ़ना प्रारम्भ किया और वहीं से सन् १६१३ में मैट्रिक्युलेशन की परीक्षा पास की। आप पढ़ने में बहुत तेज़ थे, फलतः सारे विश्वविद्यालय में आपका नम्बर दूसरा रहा। इसके बाद आप कलकत्ता आकर प्रेसी-डेन्सी कालेज में दाखिल हो गये और अध्ययन करने लगे। कभी-कभी आप धार्मिक पुस्तकें भी देख लेते थे और अपनी माता से इन विषयों पर बहस भी कर लिया करते थे। आपने राम-कृष्ण कथामृत आदि धार्मिक पुस्तकों का अध्ययन किया था। आपका हृदय उदारता से ओत-प्रोत था अतः कालिज-जीवन में आपका अधिकांश समय बीमारों की परिचर्या और पीड़ितों की सेवा करने में ही बीतता था।

विद्यार्थी-अवस्था में ही आपको एक बार साधु बनने की सनक सूझी और झट गुरू की तलाश में चुपके-से निकल

भागे। घर किसी से जिक्र भी नहीं किया और हरद्वार, बनारस तथा बृन्दावन आदि तीर्थों में घूमते और सैर-सपाटे करते रहे। इस बीच आपका कितने ही साधुओं से परिचय हुआ लेकिन ऐसा एक भी न मिला जो दिल की प्यास बुझा सकता—जिज्ञासु की जिज्ञासा शान्त कर सकता। अन्त में जब यह देख लिया कि प्रायः सभी साधु नाम के ही साधु हैं और वे गृहस्थियों से भी अधिक ऐश-अशरत पसन्द करते हैं तो आंखें खुल गईं और आपने गुरू की तलाश का विचार छोड़ घर का रास्ता लिया।

कलकत्ता में फिर से इन्टरमीडियेट की पढ़ाई शुरू हुई और यथासमय परीक्षा में प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हो गये। अब आप फिलासफी का विषय लेकर बी० ए० में दाखिल हुये।

आप निर्भय, निःशङ्क एवं अन्याय के प्रति विद्रोही सदा से रहे हैं। एक बार आपने कालेज के एक प्रोफेसर सी० एफ० ओटन को, कुछ विद्यार्थियों का अपमान करने के कारण पीट दिया। परिणाम यह हुआ कि आपको कालेज से निकाल दिया गया। वहीं आपने एक बार विद्यार्थियों की हड़ताल भी करा दी थी।

अब आपकी पढ़ाई रुक गई और इस प्रकार दो वर्ष बीत गये। लेकिन कोशिश के फलस्वरूप बाद में, सर आशुतोष की सहायता से कलकत्ता विश्वविद्यालय की अनुमति, कालेज में दाखिल होने के लिये मिल गई और आपने स्काटिश चर्चेज़ कालेज

से बी० ए० की उपाधि प्राप्त कर ली। फिर सन् १९१९ में आई० सी० एस० की प्रतियोगिता-परीक्षा में बैठने इङ्गलैंड चले गये। वहां आपने इम्तिहान दिया लेकिन दिल में यह सन्देह बैठ गया कि पास नहीं होऊंगा। फिर भी आप पास हो गये और सारे विद्यार्थियों में चौथे नम्बर पर निकले। मनोविज्ञान और नीति-शास्त्र में आपने कैम्ब्रिज यूनीवर्सिटी से भी बी० ए० की डिग्री प्राप्त की।

इस प्रकार अपने शिक्षा-कार्य में सफलता प्राप्त कर सुभाष भारत लौटे और आते ही सरकारी पोस्ट पर आरूढ़ हो गये।

(२)

कर्म-पथ पर

पदारूढ़ होने पर आपके सामने 'अफसरी' के स्वच्छन्द और प्रलोभनपूर्ण जीवन का राज-पथ खुल गया था। नई जवानी, नया जोश; विलायती शिक्षा और स्वतन्त्र कार्य-क्षेत्र—यदि युवक सुभाष चाहता तो सांसारिक सभी सुखोपभोग उसके लिये सुलभ थे। लेकिन ईश्वर को कुछ और ही मंजूर था।

भारत के इतिहास में १६२० का नागपुर कांग्रेस-अधिवेशन चिर-स्मरणीय रहेगा। उसमें कांग्रेस ने 'असहयोग' का प्रस्ताव पास करके अपनी पुरानी भीख मांगने और सिर्फ प्रस्ताव पास

करके चुप हो जाने की नीति को त्याग कर गान्धी जी के नेतृत्व में बग़ावत का झण्डा बुलन्द किया।

यह वह समय था, जब पंजाब के हत्याकांड की चोट से तमाम भारत तिलमिला उठा था। जलयानवाला बाग के उस अमानुषिक हत्याकांड ने हिन्दुस्तानियों की आंखें खोल दीं। उन्हें मालूम हो गया कि अंग्रेजों की नजरों में भारतीयों के जीवन का क्या मूल्य है! देश में एक सिरे से दूसरे सिरे तक बिजली की लहर-सी दौड़ गई। महात्मा गांधी के आव्हान पर लोग ब्रिटिश सरकार से लड़ने के लिये मैदान में उतर आये। सत्याग्रह आन्दोलन छिड़ गया। असहयोग युद्ध का नाद बज उठा। सैकड़ों सरकारी कर्मचारियों ने नौकरियाँ छोड़ दीं, हजारों विद्यार्थियों ने स्कूलों-कालिजों का बहिष्कार कर दिया। वकीलों ने प्रैक्टिस छोड़ दी और उपाधिधारियों ने उपाधियें वापिस कर दीं। जगह-जगह विराट् प्रदर्शन हुये और लोगों से जेलें भरी जाने लगीं।

हिन्दुस्तानियों के उस उत्साह और जोश को देख कर सरकार एकदम घबरा-सी गई। तत्कालीन वायसराय लार्ड रीडिंग ने महात्मा जी के सामने राउण्डटेबिल कानफरेन्स का प्रस्ताव रखा लेकिन सब नेताओं और कार्यकर्ताओं के जेल में होने के कारण गान्धी जी ने उसे ठुकरा दिया।

उस समय देशबन्धु चित्तरंजन दास बंगाल के बेताज बादशाह थे। उनकी आवाज पर हजारों बंगाली नौजवान अपने

उज्ज्वल भविष्य की ममता छोड़ कर और सांसारिक सुख-साधनों पर लात मार कर समरांगण में उतर आये।

सुभाष बोस अभी नये-नये ही विलायत के स्वतन्त्र वायु-मण्डल की हवा खा कर लौटे थे। ऐश्वर्य और शासन का मोहक पथ यद्यपि उनके सामने था लेकिन आत्म-सम्मानी युवक ने सोने के पिंजड़े में फंसा रहना अपना अपमान समझा। वह उसके मोह में न फंसा और एकदम अपनी ऊंची नौकरी को लात मार कर असहयोग आन्दोलन में कूद पड़ा। सांसारिक भोग-विलास की मृगतृष्णा के आगे गुलामी की जंजीरों में जकड़ी भारतमाता की करुण पुकार उसे कहीं अधिक हृदय-ग्राह्य लगी और बहादुर सुभाष ने उसी क्षण से स्वतन्त्रता-युद्ध के कंटकाकीर्ण मार्ग को अपना जीवन-पथ बना लिया। फिर उसे न और कोई धुन रही, न वासना। रात-दिन देश की चिन्ता और देश-सेवा की लगन ही रहने लगी।

देशबन्धु की नजर इस होनहार युवक पर जो पड़ी तो उसे अपना प्रधान सेनापति बनाने में विलम्ब न किया। अब तो उनके हर एक कार्य में सुभाष बाबू का बहुत बड़ा हिस्सा रहने लगा। सेनापति जिस मुहिम को बहुत कठिन समझता था, सुभाष बाबू की नियुक्ति उसी पर होती थी। सलाहकार तो और भी थे लेकिन कार्यक्षेत्र में आगे आप ही रखे जाते थे। सुभाष ठीक अर्थों में देशबन्धु दास का दायां हाथ बन गये।

मई सन् १९२१ में दास बाबू ने एक बंगाल नेशनल कालेज

की स्थापना की थी। श्री बोस उसके प्रिन्सिपल नियुक्त हुये। लेकिन ६-७ महीने बाद उसी दिसम्बर में राष्ट्रीय स्वयंसेवक दल के कप्तान-रूप में कार्य करते हुये आप गिरफ्तार कर लिये गये और ६ मास की सजा मिली। यही आप के जेल-जीवन का श्रीगणेश हुआ।

वह, सन् १९२२ का अक्तूबर था। उत्तरी बंगाल में भीषण बाढ़ आ गई। सर्वत्र हाहाकार मच गया। गांव के गांव नदारद। हजारों प्राणी बे-घरबार हो, भटक गये। न खाने को अन्न, न पहनने को कपड़ा, फिर परिवार के विनाश का आत्मिक क्लेश! लोग तड़प उठे। भला, ऐसे समय में सहृदय सुभाष क्या चुप रहता? वह निकल पड़ा और बाढ़-पीड़ित इलाके में राहत-कार्य का संगठन कर डाला। बंगाल रिलीफ कमेटी के मन्त्री के रूप में आपने जिस योग्यता और तत्परता से कार्य किया उसे देखकर जनता आपकी संगठन-शक्ति की क़ायल हो गई और लोगों पर आपका सिक्का बैठ गया।

दिसम्बर १९२२ में गया में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ। सुभाष भी देशबन्धु के साथ उसमें पहले-पहल शामिल हुए और वहां स्वराज्य-पार्टी के कौंसिल-प्रोग्राम का समर्थन किया। गया से वापिस आकर आप चुनाव-युद्ध में संलग्न हो गये और फिर स्वराज्य-पार्टी के प्रमुख पत्र 'फारवर्ड' के प्रधान सम्पादक नियुक्त हुए। सन् १९२४ में जब दास बाबू ने कलकत्ता कारपोरेशन पर कब्जा किया तो आप अप्रैल में उसके एक्ज़ीक्यूटिव अफसर

बनाये गये और सिर्फ १५००) मासिक पर कार्य करते रहे। इधर देशबन्धु के सफल आक्रमणों से सरकार घबरा गई और उनके सहायकों को चुन-चुन कर जेल के सीखचों में बन्द किया जाने लगा। अभी नये पद पर कार्य करते हुए सुभाष बाबू को कुछ ही महीने हुए थे कि कृष्ण-मन्दिर का निमन्त्रण आ पहुंचा।

(३)

माण्डले की जेल

अक्तूबर १९२४ में लार्ड लिटन के शासन में बंगाल सरकार ने फिर से दमन-चक्र चलाना शुरू कर दिया। नौकरशाही स्वराज्य-पार्टी की हलचलों से दहल उठी थी और राष्ट्र की बढ़ती हुई आकांक्षा का गला घोंट देना चाहती थी। इसलिए एक बंगाल आर्डिनेंस के नाम से नया कानून पास किया गया, जो १९१५ के युद्ध कानून (डिफेंस आव इंडिया एक्ट) के समान था। इसी आर्डिनेंस के आधीन श्री सुभाष तथा अन्य अनेक देशभक्तों व स्वराज्य पार्टी के सदस्यों को गिरफ़्तार करके, बिना मुकद्दमा चलाये जेलों में बन्द कर दिया गया।

देशबन्धु दास ने इन मनमानी गिरफ्तारियों और सजाओं का सख्त विरोध किया। उन्हीं दिनों कलकत्ता कारपोरेशन की ओर से हुई एक विरोध-सभा में बोलते हुए आपने कहा था:—

"यदि देश-प्रेम अपराध है तो मैं भी अपराधी हूं। यदि सुभाषचन्द्र बोस अपराधी हैं तो मैं भी अपराधी हूं। इस कारपोरेशन का चीफ एक्जीक्यूटिव अफसर ही नहीं, बल्कि इसका मेयर भी उतना ही अपराधी है।"

सुभाष बाबू २५ अक्तूबर १९२४ को गिरफ्तार किये गये थे। शुरू-शुरू में आप अलीपुर सेण्ट्रल जेल में रखे गये, फिर वहां से बहरामपुर जेल (मुर्शिदाबाद) को बदल दिये गये। यहां भी कुछ मास ही रहने पाये होंगे कि बंगाल से दूर—माण्डले (बरमा) के उस ऐतिहासिक क़ैदखाने में ले जाकर डाल दिये गये, जहां कि पहले कभी स्व० लोकमान्य तिलक और स्व० ला० लाजपतराय बन्द रखे गये थे। वीर की प्रचण्ड देश-भक्ति का यही पुरस्कार था।

माण्डले की आबोहवा अस्वास्थ्यकर है। अतः वह सुभाष के भी अनुकूल नहीं पड़ी और वह बीमार रहने लगे। थोड़े समय में ही आपका ४० पौंड वजन कम हो गया और शरीर पर तपेदिक के-से लक्षण दिखाई देने लगे। लेकिन जिसका जीवन-सर्वस्व ही देश के अर्पण हो, उसे क्या चिन्ता? ऐसी दुःखद स्थिति में भी आप धैर्यपूर्वक जेल की सब यातनायें खुशी

से सहते रहे। उस एकान्त कोठरी में मातृभूमि का भव्य चित्र उनकी आंखों में और भी उज्ज्वल होकर उतर आया। दिन और रात—चौबीसों घंटा आपका एक ही स्वप्न था—देश और देश की स्वतन्त्रता! इतना सब-कुछ होते हुए भी आपका स्वास्थ्य तो निरन्तर गिरता ही जा रहा था। यहां तक कि अप्रैल १९२७ में शय्या की शरण लेनी पड़ गई। आपके भाई डा० सुनीलचन्द्र बोस तथा सरकार के बड़े-बड़े डाक्टरों ने आपकी शरीर-परीक्षा की और यह राय दी कि उनका स्वास्थ्य खतरनाक अवस्था की ओर जा रहा है। बंगाल सरकार ने डाक्टरों की सिफारिश पर सुभाष बोस को स्वास्थ्य-सुधार के लिए स्विटज़रलैण्ड जाने की इज़ाजत दे दी। लेकिन एक शर्त्त लगा दी कि वह कलकत्ता या किसी भी भारतीय बन्दरगाह पर उतर नहीं सकेंगे। बहादुर के आगे शर्त्त-वर्त क्या? उन्होंने तुरन्त रिहा होने से इन्कार कर दिया और अपने बड़े भाई श्री शरतचन्द्र बोस को एक पत्र में लिखा कि "मैं अनिश्चित काल के लिए विदेश में रहने की अपेक्षा भारत की जेल में ही तिल-तिल करके मर जाना पसन्द करूंगा। सरकार का क्या भरोसा है कि वह कब तक मुझे निर्वासन में रखे!"

सरकार ने आपको यह कह कर जेल में बन्द किया था कि तुम किसी षड्यन्त्रकारी दल के सदस्य हो, जो विदेशों से शस्त्रास्त्र मंगाता है, बम आदि विस्फोटक पदार्थ तैयार करता है और पुलिस अफसरों की हत्या करता है। इतने बड़े अभियोग

का, किन्तु सबूत भी पेश करना जरूरी नहीं समझा गया। यही नहीं, सरकार तो और भी आगे निकल गई और उसने अपनी असलीयत का पूरा-पूरा सबूत तब पेश किया जब कि डाक्टरों द्वारा उनके स्वास्थ्य के सम्बन्ध में चिन्ता प्रकट करने पर भी बंगाल-कौंसिल में यह ऐलान किया गया कि 'श्री सुभाष बोस की अवस्था इस समय चिन्ताजनक नहीं है और वह अभी अशक्त नहीं हुए।' मानो, जब उनकी अवस्था सब इलाजों से परे होकर, मरने के करीब हो जायगी, तब ही सरकार की दृष्टि में उनकी बीमारी चिन्ताजनक होगी! ऐसी दशा में यह क्या विश्वास कि विदेश जाने पर भी सरकार उनको चैन से बैठने देती! छाया की तरह हर वक्त सी० आई० डी० के भूत उनके पीछे पड़े रहते और किसी बौल्शेविक क्रान्तिकारी दल का सदस्य बतला कर उन्हें फिर किसी केस में धर घसीटा जाता। तब उनकी भी वही हालत होनी थी जो अन्य निर्वासित देश-भक्तों की हुई। इन्हीं सब बातों पर विचार करके सुभाष बाबू ने निर्वासन की अपेक्षा मातृभूमि में ही खपने का निश्चय कर लिया और अपने भाई को लिखा :—

"स्वतन्त्रता का अमूल्य कोष प्राप्त करने के लिये तो हमें व्यक्तिगत और सामुदायिक दोनों तरह से कष्ट उठाना पड़ेगा। ईश्वर को धन्यवाद है कि मेरे हृदय में शान्ति है। मैं ऐसी किसी भी आपत्ति का शान्तिपूर्वक सामना करने को समर्थ हूं, जो मेरे भाग्य में लिखी होगी। मैं समझता हूं कि मैं अपने

राष्ट्र के अतीत काल के पापों का अपने ढंग से प्रायश्चित्त कर रहा हूं और इसका मुझे सन्तोष है। हमारे विचार अमर हैं, वे राष्ट्र के स्मृति-पटल से नहीं उतर सकते। हमारे सुन्दर स्वप्नों की विरासत आने वाली पीढ़ियों को मिल जायगी — यही विश्वास और आशा हैं, जो मुझे इस दण्ड-काल में सदा सहारा देंगे।"

जब सरकार अपने उद्देश्य में कृतकार्य न हुई और डाक्टरों ने दुबारा शरीर-परीक्षा के बाद भी यही राय दी कि सुभाष बाबू का स्वास्थ्य बहुत खराब है और उन्हें जल्दी से जल्दी किसी स्वास्थ्यप्रद स्थान पर भेज देना चाहिये तो अब उसके पास रिहाई के अलावा कोई चारा न रहा। अतः लगभग २॥ वर्ष जेल की दीवारों में बन्द रखने के बाद, उनके स्वास्थ्य का दिवाला निकाल कर ही सरकार ने सुभाष बाबू को बिना शर्त के रिहा कर दिया।

आपकी रिहाई का समाचार पाकर बंगाल हर्ष से पागल हो उठा। लोग समय से बहुत पहले अपने प्यारे युवक नेता को लेकर आने वाले जहाज की प्रतीक्षा में घाट पर जमा होने शुरू हो गये, लेकिन उनकी निराशा का कोई ठिकाना न रहा जब उन्होंने देखा कि जहाज बीच धार में ही रोक लिया गया है। डाक्टरों ने जहाज पर ही शरीर-परीक्षा की। वह पहले से आधे भी नहीं रह गये थे। आपका पीला और अत्यन्त दुर्बल शरीर देख कर दर्शक रो पड़े। यह सब होने पर भी वह खुद

प्रसन्न प्रतीत होते थे। एक रात श्री बोस को जहाज पर ही बितानी पड़ी और अगले दिन आपकी रिहाई का परवाना आ गया।

देशभर में आपके जेल से मुक्त होने पर हर्ष प्रकट किया गया और मन्दिरों एवं सभाओं में स्वास्थ्य-लाभ के लिये भगवान् से प्रार्थना की गई।

(४)

कलकत्ता कांग्रेस

जेल से निकलने के बाद सुभाष बाबू स्वास्थ्य-सुधार में लगे। आबहवा का परिवर्तन, स्वच्छन्दता का वातावरण; उन के दिल की उमंग और उत्साह ने खोये हुये स्वास्थ्य को फिर से प्राप्त करने में अधिक समय न लिया और वे पूर्ण स्वस्थ होकर पुनः कार्यक्षेत्र में निकल पड़े। युवक सुभाष के उत्साह का क्या कहना था! आज बाढ़-पीड़ितों की सहायता का प्रबन्ध कर रहे हैं तो कल चुनाव-प्रचार में लगे हुए हैं। कभी कौंसिल-चेम्बर में गरज रहे हैं तो कभी युवकों को स्वतन्त्रता के मंत्र की दीक्षा दे रहे हैं। कभी बंगालियों से सलाह-मशविरा में व्यस्त हैं तो कभी किसी अन्य प्रान्त के दौरे में मस्त हैं। तात्पर्य यह कि

उस समय तमाम हिन्दुस्तान में वह स्वाधीनता का सन्देश लेकर घूमते-फिरते थे। आपने पटना के एक भाषण में कहा—"हमारे देश की आज ऐसी अवस्था है कि बीमार रहने से हमारा काम नहीं चल सकता।" इसी उत्साह का कारण था कि आप इतनी जल्दी स्वस्थ भी हो गये।

'डेलीमेल' लण्डन के बम्बई-सम्वाददाता ने इस पर लिखा था—"गरम दल के युवक नेता श्रीसुभाषचन्द्र बोस ने, जो अस्वस्थ होने के कारण रिहा किये गये थे, इतना शीघ्र स्वास्थ्य-लाभ कर लिया है कि सम्भवतः वह महात्मा गांधी का स्थान ले लेंगे।"

आपकी चहुंमुखी सेवाओं ने देश-भर का ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर लिया और इसी के फलस्वरूप आप मद्रास कांग्रेस में, अ० भा० कांग्रेस कमेटी के मन्त्री चुने गये। लेकिन विचारों में अधिक उग्र होने के कारण कांग्रेस-अधिकारियों से अधिक दिन निभा न सके और बीच ही में इससे त्यागपत्र दे दिया। इन्हीं दिनों स्वतन्त्रता लीग की स्थापना हुई, जिसमें श्री श्रीनिवास आयङ्गर और पं० जवाहरलाल नेहरू के साथ आपका भी बहुत बड़ा हाथ था।

नेहरू रिपोर्ट-कमेटी के भी आप सदस्य थे और 'पूर्ण स्वाधीनता' की मांग के अधिकार को सुरक्षित रखते हुये आपने उसमें काफी भाग लिया। साइमन कमीशन के बायकाट में भी आप अग्रणी रहे थे।

सितम्बर १९२८ में जमशेदपुर की टाटा कम्पनी के मजदूरों ने अधिकारियों से असन्तुष्ट हो कर हड़ताल की हुई थी। आपने

बीच में पड़ कर पुराने मजदूर संघ से कम्पनी के मैनेजर का फैसला करा कर इस हड़ताल का सफलतापूर्ण अन्त करा दिया। आपके इस कार्य ने राजनैतिक नेताओं के सामने भारतीय मजदूरों को अपनाने का एक सराहनीय आदर्श उपस्थित किया था।

आपकी हलचलों के परिणाम-स्वरूप अक्टूबर में बंगाल में एक बंगाल प्रान्तिक स्वातन्त्र्य-संघ की भी स्थापना हुई और आप ही इसके प्रथम अध्यक्ष निर्वाचित हुये। इन्हीं दिनों नागपुर में जनरल अवारी के चित्र का उद्घाटन करने के कार्य को लेकर सी० पी० के कई शहरों का दौरा किया और जिस २ जगह आप गये, सवत्र जोरदार स्वागत हुआ। स्थानीय लोकल बोर्डों और संस्थाओं ने मानपत्र भी भेंट किये थे।

सन् १९२८ के दिसम्बर में कलकत्ते में कांग्रेस का ४४ वां अधिवेशन था। स्वागत-कारिणी समिति में आपको दलपति का पद दिया गया था। अतः आप स्वयंसेवक जुटाने में लग गये और थोड़े ही दिनों में २००० स्वयंसेवकों की ट्रेन्ड सेना तैयार कर ली। इस सेना के सेवकों ने कांग्रेस के समय जिस कार्य तत्परता और सेवा-भाव का परिचय दिया था, वह अभी तक लोगों को भूला नहीं है। कलकत्ता कांग्रेस के देखने वाले जानते हैं कि स्वागत-समिति में दो शक्तियां थीं। समिति के अध्यक्ष श्री सेनगुप्त थे और सेनापति श्री सुभाष बोस। क़ानूनी तौर पर प्रबन्ध के मुखिया तो श्री सेनगुप्त ही थे, परन्तु वस्तुतः सम्पूर्ण उत्सव पर सुभाष बाबू का व्यक्तित्व हावी मालूम होता था।

सब लोग जानते थे कि कांग्रेस की वर्किंग कमेटी सुभाष बाबू से घबराती है, और बचती है ; परन्तु मशीन को चलाने वाला हाथ तो सुभाष बाबू का था, उसके बिना गुजारा कैसे होता ?

यह कांग्रेस अपनी शान-बान की निराली ही थी। इसकी अनेक चीजें अभूतपूर्व थीं। सभापति पं० मोतीलाल नेहरू के ठाठदार स्वागत-समारोह पर बड़े-बड़े सम्राट् भी डाह कर सकते हैं। २४ घोड़ों की गाड़ी में राजर्षि नेहरू का जुलूस जा रहा था, उस समय सबसे आकर्षक दृश्य, जो दर्शक की आंखों में गढ़ गया, वह था स्वयंसेवकों के सेनापति श्री सुभाषचन्द्र बोस की शानदार मूर्ति ! कोई चित्रकार यदि उस चित्र को तैयार कर सके तो करोड़ों कापियां हाथों-हाथ बिक जांय। सुभाष बाबू का हंसता हुआ गोरा और गोल चेहरा उस फौजी वेष में ऐसा सजा जैसे मुकुट में हीरा सजता है। सुभाष बाबू पूरा फौजी वेष पहने, सभापति के आगे-आगे जाने वाली मोटर में, एक पांव कुछ ऊंची जगह पर रक्खे, ऐसी शान से खड़े थे, कि देखते ही बनता था। प्रतीत होता था कि चीन का प्रधान सेनापति युद्धस्थल का निरीक्षण कर रहा है। वह मोटर जहां जाती थी, वहां 'सुभाष बाबू की जय' गूंज जाती थी।

इस प्रकार जो बांकी तसवीर जनता के हृदयों में आपने खिचवाई, वह कांग्रेस के प्रबन्ध को देख कर मिटी नहीं, प्रत्युत और भी बढ़ गई।

(५)

बाधाओं के मुख में

देशबन्धु दास की मृत्यु के बाद दुर्भाग्यवश बंगाल के कांग्रेसियों में फूट पैदा हो गई और दो दल बन गये थे। यद्यपि सुभाष बाबू तब मांडले में कैद थे, लेकिन छूट कर आने पर आपको भी इस दलदल में फंसना ही पड़ा। आप श्री सेनगुप्त के प्रतिद्वन्द्वी समझे जाने लगे। कांग्रेस के कर्णधार आप से चौंक ही चुके थे, अतः उनकी सहानुभूति भी आपसे दूर—दूसरी ओर ही प्रायः बनी रही। अब बची सरकार, सो वह तो उनसे घबराती ही थी। इस तरह सुभाष बाबू के चारों ओर कांटे ही कांटे बिछ गये। लेकिन अपनी वीरता और दृढ़ता

के कारण आप न तो घबराये और न किंकर्त्तव्य विमूढ़ ही हुए, अपितु पूरे जोश के साथ कार्य-क्षेत्र में जमे रहे।

जनवरी १६२६ में कलकत्ता में राष्ट्रभाषा सम्मेलन हुआ। महात्मा गांधी सभापति थे। आपने तब स्वागताध्यक्ष के पद से हिन्दी में भाषण करते हुए कहा था—"हम लोग जो मजदूर-आंदोलनों में काम करते हैं, हिन्दुस्तानी भाषा की जरूरत को हर रोज महसूस करते हैं। बिना हिन्दुस्तानी भाषा जाने हम उत्तरी भारत के मजदूरों के दिल तक नहीं पहुंच सकते।" आगे आपने कहा—"यदि हम लोगों ने तन, मन, धन से प्रयत्न किया तो वह दिन दूर नहीं जब भारत स्वाधीन होगा और उसकी राष्ट्रभाषा होगी 'हिन्दी'।

४ मार्च को विदेशी कपड़ों के ढेर में महात्मा जी द्वारा लगाई आग के कारण पुलिस ने सभा पर हमला बोल दिया। लाठीचार्ज हुआ और महात्मा जी गिरफ्तार कर लिये गये। इसी चक्कर में आपको भी धक्का-मुक्की का शिकार होना पड़ा। लेकिन इससे क्या? अगले रोज सार्वजनिक सभा का सभापतित्व करते हुए आपने दहाड़ा—"महात्मा गांधी ने सोमवार की रात को जो आग जलायी है वह तब तक नहीं बुझेगी, जब तक हमारे देश में विदेशी कपड़े का एक भी टुकड़ा रहेगा। हमें विदेशी कपड़े के बायकाट के लिए प्रबल लोक-मत बनाना चाहिए और नौजवानों को घर-घर इस कपड़े की होली करनी चाहिए।"

इसी साल बंगाल-कौंसिल का चुनाव हुआ। उसमें आपने काफी दिलचस्पी ली और कांग्रेस पार्टी को खूब सफलता प्रदान कराई। आप भी एम० एल० सी० बने।

११ अगस्त को कलकत्ते में राजनीतिक पीड़ित-दिवस के उपलक्ष में जुलूस निकाला गया था। आप उसके मुखिया थे। जुलूस काफी सफल हो गया, इस पर सरकार चिढ़ गई और ३ सितम्बर को आपको समन मिला कि ता० ६ को अदालत में हाजिर हो। मगर वीर सुभाष के कान पर जूं भी न रेंगी। अतः बंगाल-सरकार ने राज-द्रोह में मुक़दमा दायर कर दिया। आप अदालत में तो हाज़िर हुए ही न थे, इससे ग़ैर-जमानती वारण्ट द्वारा २५ अक्तूबर को पकड़ लिये गये—और फिर २७ अक्तूबर को जमानत पर छूटे।

इस बीच १८ अक्तूबर को पंजाब प्रान्तिक विद्यार्थी राजनैतिक कान्फ्रेन्स का सभापतित्व लाहौर जाकर कर आये थे। वहां आपका जोरदार स्वागत हुआ।

दिसम्बर में अ० भा० कांग्रेस कमेटी के लिए चुनाव आ पहुंचा। आप और श्री जे० एम० सेन गुप्त भी उम्मीदवार थे। वोटिंग हुआ और घोषित किया गया कि सुभाष बाबू को सब से अधिक वोट मिले हैं। इससे आपकी लोक-प्रियता का पता लगता था।

लाहौर में कांग्रेस का अधिवेशन था। युवक जवाहरलाल सभापति थे। समझा जाता था कि यहां युवक दल का बोलबाला

रहेगा, लेकिन दो महापुरुषों का जादू काम कर गया। जवाहरलाल जी दब-से गये, और वहां वही हुआ जो महा० गांधीजी ने चाहा। यद्यपि यहां कांग्रेस की नीति में परिवर्त्तन करके 'पूर्ण स्वतंत्रता' की घोषणा की गई, किन्तु युवक सुभाष को सन्तोष न हुआ। उसे धीरे-धीरे की नीति पसन्द नहीं, वह तो एक-दम कर गुजरना चाहता है। इसीलिए म० गांधी के पूर्ण स्वाधीनता वाले प्रस्ताव में उसने लाहौर में 'मुकाबिले की सरकार' बनाने का संशोधन रक्खा था। मगर पास न हो सका। वह अधीर हो उठा, विद्रोह के भाव भी दौड़ गये, लेकिन वह संभला रहा।

कुछ समय पहले से ही जवाहर और सुभाष की युवक जोड़ी समझी जाती थी। दोनों में अनेक समानतायें थीं भी - दोनों की देशभक्ति गंगाजल से भी स्वच्छ और अग्नि से भी तीव्र थी, दोनों अच्छे लेखक और वक्ता थे, दोनों वीर और साहसी थे, दोनों देश को एकदम आगे बढ़ाने का संदेश सुनाने वाले थे, और दोनों एक ही पार्टी के मुखिया समझे जाते थे। लेकिन लाहौर कांग्रेस में यह स्पष्ट होगया कि सुभाष बाबू को जवाहर-लाल जी भी सन्तुष्ट नहीं कर सके। केवल यही नहीं, वहां तो नेहरू जी के अध्यक्ष रूप से दिये गये एक चुनाव सम्बन्धी रूलिंग से असन्तुष्ट होकर बैठक से वाकआउट कर आने वालों में आप भी थे। इन लोगों ने वहीं अपनी एक अलग कान्फ्रेन्स करके 'कांग्रेस डिमोक्रेटिक पार्टी' के नाम से कांग्रेस के ही अन्तर्गत एक नया दल खड़ा कर लिया। इसके प्रधान श्री श्रीनिवास आयंगर

और मन्त्री सुभाष बाबू ही बनाये गये। लाहौर-कांग्रेस ने फिर तो आपको वर्किंग कमेटी में भी नहीं रखा।

इस प्रकार लाहौर से निराश आप कलकत्ता लौट आये। १७ जनवरी को ही कांग्रेस के कौंसिल-बहिष्कार के निर्णय-स्वरूप आपने बंगाल कौंसिल और कलकत्ता कारपोरेशन से त्यागपत्र दे दिया। आपने बंगाल कौंसिल के अन्य सभी कांग्रेसी सदस्यों से भी मेम्बरी का स्तीफा देकर तुरन्त कांग्रेस-प्रोग्राम की पूर्ति में लग जाने की अपील की थी।

अभी आप अपनी स्कीम पूरी तरह बना भी न पाये थे कि ता० २३ जनवरी को दफा १२४ ए तथा १२० धारा के अनुसार राजद्रोह और षडयन्त्र के मामले में फैसला सुनाने का दिन आ पहुंचा। सरकार भला कब चूकने वाली थी। अलीपुर के एडीशनल डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट ने १ वर्ष की कड़ी कैद की सज़ा ठोंक ही दी। लेकिन एक दया की कि आप के साथ स्पेशल कैदियों का-सा व्यवहार करने की सिफारिश कर दी। सुभाष बाबू जेल भेज दिये गये।

२६ जनवरी का दिन था। वह! सारे देश ने उत्साह और उमंग के साथ उस दिन स्वाधीनता का प्रथम दिवस मनाया। आज़ादी का दीवाना सुभाष कैसे रह जाता? एक क्या अनेक बाधायें आयें; जेल क्या और भी अन्धेरी कालकोठरी में क्यों न पड़ा हो - वह तो स्वाधीनता-दिवस मनायेगा ही। राष्ट्र-गान गायेगा, स्वाधीनता की प्रतिज्ञा दुहरायेगा और तिरंगा झण्डा भी

फहरायेगा। जेल में हलचल मच गई। स्टाफ हैरान रह गया। सब दंग थे, आखिर यह झगडा यहां आया कैसे? सुभाष—अपराधी सुभाष—से 'पूछा गया तो उत्तर मिला--"झगडा लाने के हम जिम्मेवार हैं, जेलर जो करना चाहें कर सकते हैं!"

थोड़े दिन और जेल में बीते। २२ अप्रैल आई। अलीपुर जेल में ही मछुआ बाज़ार बम केस के अपराधियों और नमक-सत्याग्रहियों के साथ जेल-अधिकारियों के दुर्व्यवहार के खिलाफ अन्य लोगों के साथ आपने भी भूख-हड़ताल कर दी। मानों आपत्तियों और बाधाओं को न्योता देकर बुलाया! वहां कुछ झगड़ा भी हो गया और बीच-बचाव करते हुये जेल-पुलिस की मार का शिकार आपको भी होना पड़ा। यही नहीं, ताले में बन्द कर दिये गये और स्पेशल अधिकार छीन कर साधारण कैदियों में डाल दिये गये।

सुभाष बाबू अब भी मगन और दृढ़ थे। न उन्हें अपने-विरोधी गिरोह के विरोध की चिन्ता थी और न नेताओं के अविश्वास की परवाह ही! उन्हें सरकारी दमनचक्र का भी तो तनिक भय नहीं। मानों वे परमात्मा के यहां से ही इस सब के लिये तैयार हो कर आये हैं।

(६)

मेयर की कुर्सी पर

इधर जेल में सुभाष बाबू हलचल के साथ दिन बिता रहे थे, उधर कलकत्ते में कारपोरेशन के चुनाव की चहल-पहल थी। कांग्रेस पार्टी ने इस बार भी सफलता प्राप्त की और १८ अगस्त १९३० के दिन आप ही उसके मेयर निर्वाचित हुये। अगले महीने, सितम्बर की २३ तारीख को, जब आप अलीपुर जेल से छूट कर आये, तब कलकत्ते ने अपने 'नगर-पिता' (मेयर) का प्रेम से स्वागत किया।

सुभाष बाबू जेल से आते ही फिर सार्वजनिक कार्यों में

फंस गये काफी ध्यान लगा कर आपने कारपोरेशन की सेवा की, मगर आपका चित्त तो दूसरी ओर ही अटक रहा था। आपके पीछे देश में सन् १६३० का सत्याग्रह-युद्ध छिड़ चुका था। भारत मां के लाखों लाल जेल के सींखचों में बन्द थे। इस बार महिलायें भी हजारों की संख्या में रणभूमि में जूझ पड़ी थीं। सरकार के दमनचक्र से वे भी न बच सकीं। हर प्रकार के अत्याचार उन पर हुए। मगर धन्य है, भारतीय ललना! तेरे साहस का क्या ठिकाना? ज्यों-ज्यों उधर दमन बढ़ा, त्यों त्यों इधर उत्साह और उल्लास आता गया। शराब के ठेकों पर, कपड़े की दुकानों में, धरने दिये। जुलूसों में आगे आईं और सभाओं में सिंहनी की भांति दहाड़ कर भारतीय स्त्रियों ने अपने प्राचीन गौरव में चार चांद लगा दिये। वे भी हज़ारों की तादाद में जेल पहुंच चुकी थीं। ऐसी दशा में सुभाष बाहर रहें और मेयर की कुर्सी पर जम कर आफीसरी छांटें यह असम्भव, एकदम असम्भव था! वह अवसर ढूंढने लगे, और इस प्रकार १६३१ का जनवरी मास आ पहुंचा। २६ तारीख को स्वतंत्रता-दिवस मनाने का आदेश था ही। स्वतंत्रता के पुजारी के लिए इस से अधिक खुशी का त्योहार और कौन-सा हो सकता है! पिछले साल तो परवश था, वह दिल खोल कर अपनी आराध्य स्वतंत्रता देवी की पूजा न कर सका था। अब की सौभाग्य मिलेगा! फिर, इस आनन्द को वह अकेला भी तो नहीं भोग सकता! आखिर, नगर-पिता के लिये यह स्वार्थ की बात होगी न! अतः

इस त्यौहार को अधिक से अधिक विस्तृत और सार्वजनिक रूप में मनाने की तैयारियां होने लगीं।

इससे पहले कि उपरोक्त सुअवसर आता, आपको मालदा जाने का काम पड़ गया। सरकार के तो कान खड़े हो चुके थे। वह बिदकी और आप पर दफा १४४ का वार कर दिया। आज्ञा उल्लङ्घन तो होनी ही थी, परिणाम-स्वरूप गिरफ्तार करके तुरन्त अदालत में पेश कर दिया गया। यहां आप सस्ते छूटे—या कहें कि भाग्य ने जोर मारा? केवल ७ दिन की सजा मिली। अब आप बड़ी अच्छी तरह स्वतन्त्रता-दिवस मना सकते थे। राजशाही जेल से २५ जनवरी को ही छूट कर आप अपनी जगह आ विराजे। मगर एक व्यथा यहां भी लगी रही और आप को कमिश्नर द्वारा २६ जनवरी के दिन जुलूस आदि में भाग न लेने का नोटिस मिल गया।

कलकत्ता नगर में उस समय अजब समां था। दफा १४४ थी ही, जगह-जगह पुलिस-पिकेट पड़े थे। घुड़सवारों का गश्त और गोरे सार्जेन्टों का आतङ्क था। जनता भयभीत थी। लोग समझने लगे कि कांग्रेस दब गई। क्योंकि उसकी ओर से कुछ भी प्रचार-प्रोपैगेन्डा नहीं था। सब प्रेसों पर पाबन्दी थी, सब लोगों को चेतावनी मिली हुई थी। दर असल ऐसी दशा में कुछ भी करना सम्भव-सा न लगता था। मगर सुभाष बाबू ने चमत्कार कर दिखाया। तारीख २६ के प्रातःकाल शहर भर में

सर्वत्र नोटिस और झण्डे चस्पां थे। कोई जगह भी ऐसी नहीं बची जहां लोग उस दिन का कार्यक्रम पढ़ने से वंचित रह जाते। पुलिस और चमकी। भाग-दौड़ बढ़ गई, धर-पकड़ हुई मगर विधाता तो निश्चिन्त बैठा हुआ था। सुभाष बाबू मेयर की कुर्सी पर आसीन हो कर सारी रचना रचते रहे मजाल क्या कि कोई चूं भी कर सके, हाथ भी लगा सके। इस कुर्सी का सदुपयोग उन्होंने आज उठाया था। वह अज्ञात समय से ही वहां जा विराजे और तब उठे जब निश्चित समय पर जुलूस की शकल में लोग राष्ट्रीय झण्डों के साथ चल दिये। सुभाष बाबू को तो उसका नेतृत्व करना ही था।

पुलिस बौखला उठी। अफसर क्रोध से तमतमा गये। अब क्या था—हुआ आक्रमण, चली लाठी! न बच्चा देखा न बूढ़ा, न स्त्री का ख्याल न पुरुष का, एकदम तड़ातड़ होने लगी। वीर जम गये, वीरांगनायें बैठ गईं। मार और चेतावनियों के बावजूद भी जब लोग न हटे तो फिर गिरफ्तारियों का तांता लग गया। उस दिन वहां सैकड़ों ही व्यक्ति घायल और गिरफ्तार हुए। ५० के करीब तो महिलायें ही पकड़ी गईं थीं। सुभाष भी मार से न बचे। आपकी दाहिनी कलाई में काफी चोट आई। गिरफ्तार भी हो गये। आपको ६ महीने की सजा सुना कर जेल भेज दिया गया। यह आपकी ५ वीं जेलयात्रा थी अतः शानदार रूप तो होना ही चाहिए था।

कारपोरेशन ने अपने बहादुर मेयर के इस सत्याग्रह की सराहना करते हुए उनकी सजा के विरोध में स्थगित-प्रस्ताव स्वीकार कर सहानुभूति प्रकट की थी।

(७)

दिल्ली-समझौते के बाद

सरकारी दमन और कांग्रेसियों के त्याग की जब पराकाष्ठा हो ली तब सर तेजबहादुर सप्रू और मि० एम० आर० जयकर ने सुलह का प्रयत्न किया। म० गांधी और वायसराय में सन्धि-चर्चा छिड़ी और दिल्ली में 'गांधी-इरविन पैक्ट' के नाम से एक समझौता हो गया। इसके अनुसार तमाम सत्याग्रही जेलों से छोड़ दिये गये। सुभाष बाबू भी इसी सिलसिले में सजा समाप्त होने के बहुत पहले ही स्वराज्य-मन्दिर से बाहर आ गये!

मार्च १९३१ के अन्तिम सप्ताह में सरदार वल्लभभाई पटेल के सभापतित्व में करांची कांग्रेस थी। आप उसमें सम्मि-

लित हुये और वहां दिल्ली-समझौते का विरोध किया। मगर चूंकि इससे आपस में फूट पड़ने का डर था, अतः अन्त में आपने भी उसे स्वीकार कर लिया। यहीं—करांची में ही आपने ता० २७ को होने वाले अ० भा० नौजवान भारत सभा का सभापतित्व करते हुये साम्यवादी जनतन्त्र शासन का समर्थन किया और ब्रिटिश साम्राज्य से सम्बन्ध विच्छेद, किसानों, मजदूरों और नौजवानों को सोशलिज्म की लाइन पर संगठन करने की सलाह दी। ता० १ अप्रैल को अ० भा० कांग्रेस कमेटी की बैठक थी। म० गांधी ने कार्यसमिति के सदस्यों की सूची पेश की, जिसमें सुभाष बाबू का नाम नहीं था। इस पर भी आपने विश्वास दिलाया कि मैं गांधी जी का साथ दूंगा, चाहे सदस्य चुना जाऊं या न चुना जाऊं।

सुभाष बाबू का सब से अधिक प्रशंसनीय गुण और देश-भक्ति-पूर्ण कार्य यही है कि सरकार के दमन और नेताओं के अविश्वास का समान रूप से सामना करते हुये उस वीर हृदय ने स्वाधीनता के युद्ध में योद्धाओं की पहली श्रेणी को कभी नहीं छोड़ा। युद्ध का बिगुल बजते ही वे मैदान में सबसे अगली क़तार में दिखाई देते हैं। न उदासीन हैं और न थकान। एक ही धुन है कि देश स्वाधीन कैसे हो ?

कांग्रेस के बाद नेता लोग सरकार से हुई सन्धि के पालन और गोलमेज कान्फ्रेंस की हलचलों में लग गये। महात्मा गांधी इङ्गलैंड रवाना हुये। सुभाष बाबू को यह सब चीज़ निरर्थक

मालूम होती थी। उन्होंने गोलमेज कान्फ्रेंस के विरोध में ही मत प्रकट किया।

८ मई को मथुरा में युक्त प्रान्तीय नौजवान भारत सभा एवं १० जुलाई को कलकत्ता में ट्रेड यूनियन कांग्रेस के ११वें अधिवेशन का सभापतित्व किया और अपने भाषणों में भारत का हित साम्यवाद पर ही निर्भर बताया।

इस बार आपने एक अत्यन्त आवश्यक कार्य अपने हाथ में लिया और वह था—आपस की फूट को दूर करने का प्रयत्न। अनेक वर्षों से बंगाल की राष्ट्रीय शक्ति फूट के कारण छिन्न-भिन्न हो रही थी। सुलह के अनेक बार प्रयत्न हुए मगर वह सफल न हो सके। श्री पट्टाभि सीतारमैया, लोकनायक अणे और पं० मोतीलाल नेहरू तक निराश हो गये। अब सुभाष बाबू ने कोशिश की और सितम्बर के मध्य में मत-भेद दूर करने के उद्देश्य से आपने बंगाल प्रान्तिक कांग्रेस कमेटी और कारपोरेशन दोनों से त्याग-पत्र दे दिया। इस अवसर पर आपने जो वक्तव्य दिया, वह बड़े मार्के का था। उसमें आपने कहा—"मैं कठोर नियन्त्रण का पक्षपाती हूं। मेरा किसी से भी द्वेष नहीं है। मैं एक तुच्छ कांग्रेसमैन की हैसियत से भी कांग्रेस की सेवा करने में सन्तुष्ट हूं। यदि बंगाल मेरे नामोनिशां के भी मिट जाने से बचाया जा सकता हो तो मैं इसमें अपना सौभाग्य समझूंगा। मैं इसमें भी खुश हूं, यदि मेरे देशवासी अपने हृदयों के एक कोने में मेरे लिए एक थोड़ा-सा स्थान बना लें।"

सितम्बर में ही बंगाल में एक भयंकर कांड हो गया। हिजली जिला मिदनापुर में १७ ता० को नजरबन्दों पर सन्तरियों ने गोलियां चला दीं, जिससे २ नज़रबन्द मारे गये और २० घायल हो गये। इस घटना से हिन्दुस्तान-भर में—विशेषतः बंगाल में असन्तोष की लहर दौड़ गई। यह गोलीकांड जलयानवाले हत्याकांड का छोटे रूप में पुनरावर्त्तन था। इसी पर विचार करने के लिये २५ अक्तूबर को दिल्ली में कांग्रेस कार्यसमिति की बैठक हुई, जिसमें बंगाल के नेताओं को भी आमंत्रित किया गया। परन्तु श्री सुभाष बोस गोलीकाण्ड के शहीद तारकेश्वर सेन की अन्त्येष्ठि में शरीक होने के कारण कार्यसमिति में शामिल न हो सके। उन्होंने तात्कालिक राष्ट्रपति सरदार पटेल को एक पत्र लिख दिया, जिसमें अनेक बातें सुझाते हुए लिखा कि इस कांड को १९१९ के पंजाब हत्याकाण्ड की तरह ही समझा जावे। कार्यसमिति ने हत्याकाण्ड की निन्दा और सन्तरियों को सजा देने के सम्बन्ध में प्रस्ताव पास कर लिया।

११ नवम्बर को आप किसी अंग्रेज अफसर की हत्या के बाद हुई पुलिस की ज्यादतियों की जांच करने के लिये एक गैर-सरकारी कमेटी की तरफ से जा रहे थे कि ढाका से ४ मील दूर लेजगांव स्टेशन पर रेल में गिरफ्तार कर लिये गये और ढाका-जेल भेज दिये गये। १४ नवम्बर को जमानत पर छूटे और फिर आप पर से यह मुकद्दमा ही हटा लिया गया। इस प्रकार यह छुटी तीर्थ-यात्रा अधूरी ही रह गई।

१९३१ की समाप्ति होने से पूर्व ही देश का वातावरण फिर गर्म होने लगा। सरकार ने सरहद, बंगाल और युक्तप्रान्त आदि में अपना दमन-चक्र पूरे जोरों से चला दिया। आर्डिनेन्सों का बोलबाला था। महात्मा गांधी भी गोलमेज से निराश लौट रहे थे। ऐसी दशा में बम्बई में दिसम्बर के अन्त में कार्यसमिति की बैठक हुई। आपने वहां २९ ता० को वर्किंग कमेटी को अल्टीमेटम दे दिया कि "यदि सरकार के बार-बार सन्धि-भङ्ग करने पर भी, जैसा कि आर्डिनेन्सों से प्रकट है, वर्किंग कमेटी युद्ध की घोषणा न करेगी तो मैं बिना उसकी स्वीकृति के ब्रह्मपुर कान्फ्रेंस के अनुसार बंगाल में बहिष्कार आन्दोलन शुरू कर दूंगा।"

इससे पहले २२-२३ दिसम्बर को पूना में महाराष्ट्र युवक सम्मेलन का आपने सभापतित्व किया और वहां भी इससे मिलते-जुलते विचार प्रकट किये थे।

(८)

नज़रबन्द

सन् १६३१ की समाप्ति के साथ-साथ बम्बई में कार्यसमिति की हलचलें भी समाप्त हुईं। नया वर्ष तीसरे सत्याग्रह-युद्ध के लिए नवीन उत्साह और नई उमंग का संदेश लेकर भारत में आया। सुभाष बाबू अनेक आशाओं को लेकर बम्बई से लौट पड़े। २ जनवरी १६३२ का दिन था, वह! आप कलकत्ता के लिए ट्रेन में सवार हो लिए और अभी ३० मील की यात्रा भी तै नहीं कर पाये थे कि कल्याण जंकशन पर आपका स्वागत करने पुलिस के प्यादे आ उपस्थित हुए। सुभाष बाबू के यहां क्या देर? वह तो बन्धना-बोरिया बांधे हर समय तैयार थे।

आप सन् १८१८ के रेगूलेशन नम्बर ३ के अनुसार गिरफ़्तार कर लिये गये और सी० पी० के सिवनी नामक स्थान में ले जाकर हाईस्कूल की इमारत में रक्खे गये। न पूछ-गछ की जरूरत और न सबूत-सफाई की। मुक़द्दमा चलाना भी व्यर्थ समझा गया। इस प्रकार आप अनिश्चित काल के लिए शाही मेहमान बना लिये गये। पीछे इस बिल्डिंग को भी सब-जेल के रूप में परिवर्तित कर दिया गया था।

बंगाल में आर्डिनेन्स का राज्य था ही। वहां न कोई पूछ-ताछ करने वाला रहा और न देख-रेख। थोड़े से सन्देह पर ही लोगों को धर-दबोचा जाता था। किसी पर जरा भी शक हुआ कि गिरफ्तार! कहीं जुरमाने होते, कहीं सम्पत्ति जब्त की जाती और किन्हीं को जेल की चहारदीवारी में बन्द कर दिया जाता था। आपके भाई श्री शरतचन्द्र बोस भी, जो कलकत्ते के बहुत ऊंचे वकीलों में समझे जाते हैं, इस सन्देह के शिकार हुए। आप उन दिनों 'लिबर्टी' पत्र के मैनेजिंग डाइरेक्टर भी थे। ६ जनवरी को आपके नाम भी यह फरमान आगया कि 'सत्याग्रह के किसी काम में सहायता न करें।' लेकिन इतने से ही तो सरकार का काम नहीं बन सकता था। उसे सन्तोष न हुआ और ता० ४ फरवरी को धनवाद में, जहां कि वे अपने वकालत के काम से गये हुए थे, शरत बाबू गिरफ्तार कर लिये गये। आप पर भी वही सन् १८१८ के रेगूलेशन नम्बर ३ का बार किया गया और सिवनी भेज दिया गया। इस प्रकार लगभग

एक महीने बाद जेल में भरत-मिलाप का दृश्य उपस्थित हुआ। शरत और सुभाष की जोड़ी अपना यह जीवन आनन्द से बिताने लगी। किन्तु 'कर्त्ता के मन और है, विधना के कछु और!' सिवनी की आबहवा भी सुभाष बाबू के अनुकूल नहीं आई और वे अस्वस्थ रहने लगे। २-३ महीने में ही उनका १८ पौंड वज़न घट गया। २ अप्रैल को आपने जेल से ही एक मित्र के नाम पत्र भेजा, जिससे प्रतीत हुआ कि आप पेट और कूले के दर्द से पीड़ित हैं। इससे लोगों में हलचल मची और सरकार ने जबलपुर, नागपुर में आपके शरीर की परीक्षा कराई। जब कुछ लाभ न हुआ तब १७ जुलाई की रात को मद्रास ले जाये गये। वहां २२ जुलाई को जनरल अस्पताल में एक्सरे परीक्षा की गई। लेकिन शारीरिक दशा गिरती ही चली गई। ६ अगस्त को पता चला कि आपको बुखार रोज बढ़ता है; कोष्ठ-बद्धता, नींद न आना और बात के दर्द की भी शिकायत रहती है, तो रिश्तेदारों ने प्राइवेट डाक्टरी परीक्षा के लिये मांग पेश की। अगस्त के मध्य में सरकार की ओर से इसके लिए आज्ञा मिल गई और २६ अगस्त को डा० विधानचन्द्र राय और सर नीलरतन सरकार ने मद्रास के जनरल अस्पताल में आपकी ३ घंटे तक शरीर-परीक्षा की। उनके निर्णय के बाद मद्रास के डाक्टरों ने प्रान्तीय सरकार द्वारा भारत सरकार को लिखा कि सुभाष बाबू के एक फेफड़े में क्षय के लक्षण हैं अतः किसी अच्छे सेनिटोरियम में इन्हें भेज दिया जाय। फलस्वरूप १० अक्तूबर १६३२ के

दिन, भारत सरकार की आज्ञानुसार आपको संयुक्त प्रान्त के भुवाली सेनिटोरियम में भेज दिया गया।

भाग्यों का चक्र — यहां भी आप ठीक न हो सके और स्वास्थ्य गिरता ही गया। नवम्बर के अन्तिम सप्ताह में समाचार मिले कि आपका वज़न ४३ पौण्ड घट गया है। इस पर देश में चिन्ता की लहर दौड़ गई और जगह-जगह आपकी रिहाई की मांग की जाने लगी। २५ नवम्बर को बंगाल कौंसिल में आप के स्वास्थ्य के सम्बन्ध में बहस के लिये स्थगित प्रस्ताव पेश हुआ और वह बिना बहस के पास होगया। सरकार, भला इतनी जल्दी मानने वाली थोड़े ही है! उसने शरीर-परीक्षा के लिये व्यवस्था कर दी और दिसम्बर के प्रथम सप्ताह में भुवाली में एक मेडीकल बोर्ड ने, जिसमें कैप्टेन केकर (सुपरिण्टेण्डेण्ट भुवाली सेनिटोरियम), लेफ्टीनेण्ट कर्नल टाउन सेंट (सिविल सर्जन नैनीताल), सर नीलरतन सरकार और आपके भाई डा० सुनीलचन्द्र बोस शामिल थे, शरीर-परीक्षा की और अन्तड़ियों में अधिक तकलीफ ठहराई। इस पर भी सरकार रिहा करने को तय्यार न हुई। हां, १८ दिसम्बर को भुवाली से बलरामपुर लाया जाकर आप को यूरोपियन वार्ड में रक्खा गया और वहां लखनऊ के सिविल सर्जन कर्नल बकले आपके इलाज पर लगे। यहां भी एक मेडीकल बोर्ड ने आप की शरीर-परीक्षा की थी। मगर होना-जाना क्या था? अब भारत सरकार के कान खड़े हुए और अन्त में १५ जनवरी १९३३ को होम सेक्रेटरी ने आपके भाई श्री सतीशचन्द्र बोस

को लिखा कि "भुवाली और लखनऊ में दोनों मेडीकल बोर्डों ने सिफारिश की है कि सुभाष बाबू को इलाज के लिये यूरोप भेजा जाय। सो, उनके क्षय का ठीक इलाज या तो फ्रान्स या स्विट-ज़रलैण्ड में हो सकता है। यदि वे वहां जाना चाहेंगे तो सरकार उन्हें यूरोप जाने की बाधाओं से मुक्त करने को तैयार है। और अगर वे पासपोर्ट का प्रबन्ध कर सके तो उन्हें लखनऊ से बम्बई पहुंचा दिया जायगा तथा उन पर से १८१८ का जो तीसरा रेगूलेशन लागू है, वह हटा लिया जायगा।"

२२ जनवरी को समाचार मिला कि आपका वजन ५४॥ पौंड घट चुका है और अब सर-दर्द भी रहने लगा है। अतः सुभाष बाबू ने यूरोप जाने का निश्चय कर लिया है और वे अपने मां-बाप से मिलना चाहते हैं। मगर सरकार ने मां-बाप से मिलने की इजाजत न दी, साथ-ही इटली और जेकोस्लोवेकिया के मार्ग से वीयना जाने के पासपोर्ट पर भी अड़चन डाल दी। इस पर आत्मसम्मानी सुभाष ने यूरोप जाने से ही इन्कार कर दिया।

अब सरकार कुछ-कुछ झुकी और सुभाष बाबू की शर्तें मानते हुये यह कहा गया कि लखनऊ में ही मां-बाप आकर मिल सकते हैं। मगर वृद्ध माता-पिता अस्वस्थता के कारण वहां आ नहीं सकते थे। तो फिर सरकार ने उनके पिता को पुरी में तार दिया कि गया सेण्ट्रल जेल में सुभाष बाबू को ही लाया जाकर आपसे भेंट कराई जा सकती है। 'पिता जी ने इसमें भी असमर्थता प्रकट कर दी। सरकार को तो भय था कि बंगाल में घुसते ही सुभाष

प्रलय मचा देगा। खैर, यह सिलसिला समाप्त हुआ और आपके माँ-बाप से बिना मिले ही यूरोप जाने की तय्यारियाँ होने लगीं। इस बीच एक घटना और हुई, जिसमें सरकार को झुकना पड़ा। ता० ६ फरवरी को आपकी भाभी श्रीमती शरत बोस आपसे लखनऊ मिलने के लिये आईं। मगर सुभाष बाबू ने पुलिस अफसर की उपस्थिति में मिलने से साफ इनकार कर दिया। १० तारीख को आपकी बात मान ली गई और ११ को यह मुलाक़ात हुई। मिलने के बाद श्रीमती शरत ने वक्तव्य में कहा कि आप का वजन ६० पौंड घट गया है।

(६)

भारत से बाहर

२३ फरवरी के दिन बम्बई से रवाना होने वाले एस० एस० गंग नामक जहाज से आपके जाने के लिये व्यवस्था की गई। अतः ता० १७ क लखनऊ से जबलपुर लाये गये। यहीं आप से मिलने के लिये परिवार के व्यक्ति कलकत्ते से आ पहुंचे थे। ता० १० को जेल में माता, चाचा, भाई, भाभी आदि से तो भेंट हो गई मगर पिता जी के दर्शन न हो सके। यही कसक लिये हुये सुभाष बाबू २२ फरवरी को जबलपुर से बम्बई और २३ को निश्चित जहाज से यूरोप के लिये रवाना हो गये।

बम्बई में यद्यपि आप पर से नजरबन्दी की पाबन्दी हटा ली गई, मगर पुलिस का व्यवहार अच्छा न रहा। यहां आपको न किसी से मिलने दिया गया और न बातचीत ही करने दी गई। यहां तक कि डा० देशमुख आदि को शरीर-परीक्षा करने की भी अनुमति न दी गई।

मार्च में आप वीयना (स्विटज़रलैंड) पहुंच गये और वहां सेनिटोरियम में इलाज प्रारम्भ करा दिया। इस प्रकार सुभाष बाबू सरकार द्वारा देशभक्ति का इनाम पाते हुये—मातृभूमि से हजारों मील दूर आ पड़े।

आपने भारत से बाहर होते ही जहाज पर से एक मार्मिक अपील देश के नाम प्रकाशित कराई,-(जिसका आशय इस प्रकार था—

"एक वर्ष से अधिक समय से मैं अपने प्रान्त से निर्वासित हूं। इस निर्वासन की अस्वास्थ्यकर अवस्थाओं के कारण मेरा स्वास्थ्य बिलकुल खो गया है। शारीरिक कष्टों के साथ मानसिक व्यथा भी कुछ कम नहीं रही। बङ्गाल से बाहर क़ैद में बन्द रखे जाने पर भी मेरा ध्यान निरन्तर उस दमन की ओर था, जो प्रान्त में एक सिरे से दूसरे सिरे तक हो रहा था। जीवन की वास्तविकता से बहुत दूर — एकदम अलग रहते हुये उन लम्बी और अंधेरी रातों में मेरे लिये शान्ति और सन्तोष की वस्तु एक ही थी। वह थी भारत माता की वह भव्य मूर्ति, जिसकी पूजा बंकिम और विवेकानन्द से लेकर द्विजेन्द्रलाल और देशबन्धु

सरीखे ऋषि-मुनियों ने निरन्तर की थी। यही भव्यमूर्ति मेरी आंखों के सामने सदा नाचा करती थी। इसी से मुझे सदा शक्ति और स्फूर्ति पैदा हुआ करती थी। मैं देखा करता था — और इस रूप में, जिसमें पहले कभी मैंने नहीं देखा था—भावी भारत का वह आकर्षक चित्र, जो मेरे लिये वास्तविकता से भी बढ़ कर था और उस समय की न्यूनताओं एवं कठिनाइयों को भुलाने के लिये बहुत काफी था।)भावी भारत के इस चित्र का वह खजाना मेरी ऐसी सम्पत्ति थी, जिसको संसार की कोई शक्ति मुझ से नहीं छीन सकती थी। इसी की मैं प्रतिदिन पूजा किया करता था।

मुझ को उत्साह, आशा और महत्वाकांक्षा से भरने वाला जो स्वप्न था, वह था उस संयुक्त बंगाल का स्वप्न, जो भारतमाता और मानव-समाज की सेवा में अपने को न्यौछावर कर देगा। यह वह बंगाल है. जो सम्प्रदायवाद और दलबन्दी से ऊपर है और मुसलमान, ईसाई तथा बौद्धों का — सब का एक-सा घर है। इसी बंगाल का स्वप्न मैं नित्य-प्रति देखा करता हूं। इसी की नित्य आरती आरता हूं और इसी की सेवा में अपने को अर्पित करने की एक-मात्र इच्छा रखता हूं।

मेरे जीवन की एक ही आकांक्षा है और वह यही कि मैं इस बंगाल के इस स्वप्न को मूर्त्तरूप दे सकूं। इस महान् कार्य में सफलता के लिये हमको अपने सर्वस्व की बाजी लगा देनी होगी। इन मिशन को पूरा करने के लिये न तो कोई

बलिदान कुछ महंगा है और न किसी प्रकार का कष्ट सहन करना ही कुछ अधिक है। मित्रो, महापुरुषों की अपने नाम की हुई वसीयत को मत भूलो। मत भूलो कि देश के भविष्य के आशा के आधार हम ही हैं। इसलिये मिटा दो आपस के छोटे-छोटे झगड़ों को, भूल जाओ व्यक्तिगत मतभेद को, यत्न करो—बंगाल को संयुक्त एवं महान् बनाने का। बंगाल के बड़प्पन पर ही हमारी प्रसन्नता और अभ्युदय निर्भर है। सोचो तो, यदि बंगाल मर जाय तो कौन जिन्दा रह सकता है और यदि बंगाल जिन्दा रहता है तो मर कौन सकता है?"

विदेश में पहुंच कर आपने अपनी हलचलें जारी रक्खीं। ता० २५ मार्च को वीयना के लार्ड मेयर से आपकी मुलाकात हुई, जिसमें उन्होंने श्रद्धाँजलि प्रदान की। नये शासन विधान सम्बन्धी 'व्हाइट पेपर' के प्रकाशित होने पर आपने ता० २७ मार्च को कांग्रेस के तात्कालिक प्रधान श्री अणे के नाम तार दे कर उसे निन्दनीय वस्तु ठहराया।

इन्हीं दिनों श्री विट्ठलभाई पटेल स्वास्थ्य-सुधार के लिये यूरोप आये हुये थे। कुछ समय बाद आप भी वीयना आ गये और इलाज कराने लगे। कांग्रेस के वर्त्तमान नेतृत्व से दोनों ही असन्तुष्ट थे अतः आपस में खूब घुटने लगी। ता० ६ मई को वीयना से ही, सविनय आज्ञा-भंग आन्दोलन स्थगित करने के निश्चय पर, दोनों ने एक संयुक्त वक्तव्य प्रकाशित करते हुये कहा कि "आन्दोलन को स्थगित करने की घोषणा के साथ कांग्रेस ने

असफलता को स्वीकार कर लिया है। समय आ गया है कि कांग्रेस-संगठन में मौलिक परिवर्तन किया जाय। वह संगठन नये सिद्धान्तों पर, नये तरीकों पर और नये नेताओं के नेतृत्व में होना चाहिये।" ता० २७ मई १९३३ को सुभाष बाबू के पत्र-व्यवहार के फलस्वरूप—भारत में एक लेखक-परिषद् की स्थापना हुई, जिसमें सर्व श्री रवीन्द्रनाथ टैगोर, रामानन्द चटर्जी, सर एस० राधाकृष्णन और शरतचन्द्र चटर्जी आदि सम्मिलित हुये।

१० और ११ जून को लण्डन में होने वाली तृतीय भारतीय कान्फ्रेन्स के आप ही सभापति निर्वाचित हुये थे। लेकिन सरकार ने इंगलैण्ड जाने की इजाजत न दी। इस पर कान्फ्रेन्स में आपका वह भाषण ही पढ़ा गया, जो सभापति-पद से देने के लिये आपने तैयार किया था। कान्फ्रेन्स में आपके परामर्श के अनुसार साम्यवादी संघ को संगठित करने के लिये २२ आदमियों को एक कमेटी बनाई गई। वहीं पार्लमेन्ट के एक सदस्य मि० मैक्सटन ने कहा कि जैसे स्वतन्त्र मजदूर-दल अब तक महात्मा जी का समर्थन करता था वैसे वह अब मि० बोस और पटेल की नीति का समर्थन करेगा। सुभाष बाबू का भाषण सरकार को अच्छा न लगा और १६ जून को उसे जब्त करके भारत में आने से रोक दिया। वीयना में रहते हुये आपने वहां की म्युनिसिपैलिटी का भी अध्ययन किया और वीयना के सम्बन्ध में एक किताब लिखने का प्रयत्न किया। अक्तबर मास में

श्रीयुत पटेल की दशा एकदम खराब हो गई, जिसमें आपने स्वयं उनकी खूब सेवा-सुश्रूषा की। मगर ईश्वर-इच्छा, वह सब व्यर्थ सिद्ध हुई और २२ अक्तूबर को पटेल जी का देहान्त हो गया। मृत्यु-समय में आप उनके पास ही थे।

वीयना के प्रवास-समय में ही श्रीयुत पटेल ने अपनी सम्पत्ति की वसीयत लिखी थी, जिस में लगभग एक लाख रुपया सुभाष बाबू के सुपुर्द करते हुये वसीयतनामे में इस प्रकार लिखा :—

"......उक्त चार दानों के बाद स्व० पटेल ने इससे ऊपर निर्देश किया हुआ है) मेरी जो सम्पत्ति बच जाये वह नं० १, वुडवर्न पार्क, कलकत्ता के सुभाषचन्द्र बोस (वल्द जानकीनाथ बोस) को दे दी जाय। इस सम्पत्ति का उपयोग सुभाषचन्द्र बोस द्वारा व उसके द्वारा नियुक्त व्यक्ति व व्यक्तियों द्वारा उसके आदेशानुसार भारतवर्ष की राजनैतिक उन्नति के लिये — ख़ास कर के विदेशों में भारतीय आन्दोलन के विस्तार के लिये किया जाय।"

इस रक़म पर श्री बोस और ट्रस्टियों में खर्च के सम्बन्ध में मतभेद हो गया और काफी आन्दोलन के बाद भी यह रकम उन्हें नहीं मिल सकी। एक बार इसी सम्बन्ध में यह भी अफवाह उड़ी कि सरकार द्वारा यह रुपया ज़ब्त कर लिया जायगा क्योंकि उसे भय है कि श्री बोस इस रुपये को ग़दरपार्टी या क्रान्तिकारियों के काम में व्यय करेंगे

श्री पटेल की बीमारी में लगे रहने से आप के स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ा और तबियत कुछ ख़राब हो आई। इसलिये आपने आबहवा बदलने के लिये भ्रमण शुरू किया। आप बुडापेस्ट (हंगरी), बुचारेस्ट (रूमानिया), सोफिया (बलगेरिया), बेलग्रेड (यूगोस्लेविया) आदि स्थानों में गये। आपने सर्वत्र भारत के सम्बन्ध में प्रचार भी किया और स्वास्थ्य-सुधार भी। नाइस में आपने 'विट्ठलभाई पटेल के अन्तिम दिन' नामक पुस्तक भी लिखी। इस प्रकार विदेश में रहते हुए आप निरन्तर कुछ-न-कुछ देश-सेवा कार्य करते ही रहे। आप की इन कार्रवाइयों से ब्रिटिश लोग चौंकते रहते थे। एक बार तो ब्रिटिश पार्लमेन्ट के एक सदस्य सर वाल्टर स्माइल्स उबल ही पड़े और भारतमन्त्री से कह डाला कि "बाबू सुभाषचन्द्र बोस ने यूरोप में रहते हुये अपने वचन का पालन नहीं किया और यहां भी उनकी ब्रिटिश सरकार-विरोधी कार्रवाइयां जारी रहीं, इसलिये उन्हें भारत लौटते ही पकड़ लेना चाहिये।"

अगस्त १९३४ में आप की वह सुप्रसिद्ध पुस्तक 'इण्डियन स्ट्रगल' इंगलैंड में प्रकाशित हुई, जिसमें भारतीय स्वाधीनता संग्राम के १३ वर्षों का इतिहास है। इस पुस्तक की इतनी अधिक बिक्री हुई कि प्रकाशक ने उत्साह में आकर यह घोषणा कर डाली कि इसका जर्मन, फ्रेंच, इटालियन आदि भाषाओं में भी अनुवाद प्रकाशित होगा। भारत-सरकार ने इसे भी जब्त करार दे डाला और घोषणा की कि सन् १८७८ के 'सी कस्टम्स एक्ट'

की धारा १६ के अनुसार विशार्ट एण्ड कम्पनी [६, जान स्ट्रीट, लन्डन] द्वारा प्रकाशित 'इण्डियन स्ट्रगल' की कोई प्रति ब्रिटिश इन्डिया में न आ सकेगी।

(१०)

पिता की मृत्यु और देश-निर्वासन

सुभाष बाबू को यूरोप में रहते हुए पौने-दो वर्ष के लगभग हो गये, लेकिन आपके स्वास्थ्य में इतनी अधिक उन्नति नहीं हुई कि जिससे बिलकुल निश्चिन्त हो जाते। सेहत की शिकायत बनी ही रही। अतः डाक्टरों की सम्मति से यह विचार किया गया कि पेट का आपरेशन करा डालना चाहिये। आप इसी उधेड़-बुन में थे कि नवम्बर में एकदम आपके पिता जी का स्वास्थ्य चिन्ताजनक हो गया। आपकी माता जी ने तार देकर बुलाया। सुभाष बाबू सन्न रह गये और शीघ्रातिशीघ्र भारत पहुंच कर पितृ-दर्शन करने के लिये आतुर हो उठे। चलते समय

भी तो आप उन से नहीं मिल सके थे अतः दिल पर जमे हुए भार को हलका करने के लिये आप हवाई जहाज द्वारा भारत उड़ आये।

पिता रोग-शैया पर पड़े-पड़े अन्तिम श्वासें ले रहे थे। वह चाहते थे कि चलते समय अपने बहादुर बेटे से मिल लूं, इसी-लिये तार दिये गये। मगर कुछ ऐसा वातावरण बन गया था कि सुभाष के आने का विश्वास न हो सका। पिता की आत्मा तड़-फड़ाने लगी और अन्तिम समय की इसी उद्विग्नता के साथ वह नश्वर शरीर को त्याग कर चलती बनी ३ दिसम्बर का प्रातः-काल था तब, जब उनका शरीरान्त हुआ। शरत बाबू आ गये थे। अतः सब लोगों ने विधिपूर्वक उनकी अन्त्येष्टि क्रिया कर दी।

हवाई जहाज उड़ा चला आ रहा था, पूरे जोर के साथ—जल्दी से जल्दी वह सुभाष बाबू को कलकत्ता पहुंचा देना चाहता था। मगर ऐसे कुसमय का चला निकला वह, कि जिस दिन करांची पहुंचा उसी दिन पिता स्वर्गस्थ हो चुके थे। सुभाष जहाज से उतरे, करांची के कांग्रेसी नेताओं से भेंट हुई, तब उनका चेहरा स्पष्ट पूछ रहा था—'पिता जी की दशा बताओ'! मगर पिता जी कहां थे? वह तो भारत मां,-नहीं-नहीं अपने ही लाल की याद में तड़प के साथ विदा हो चुके थे! सुभाष को अब वह नहीं मिल सकेंगे-इस दुःखद सन्देश को देते लोग डरने से लगे। किन्तु क्या सचाई छिपी रह सकती है? बता दिया गया—'पिता जी नहीं रहे'। दिल टूट गया, आंखें बरस पड़ीं और व्यथित

सुभाष थोड़े समय के लिये अस्त-व्यस्त हो गये। पूरे तीन वर्ष से वे उनसे अलग ही अलग रहे, एक बार भी तो न मिल सके थे। अतः पुरानी स्मृतियां ही दिमाग में दौड़-दौड़ कर आने लगीं। मगर सहा, सब-कुछ सहा; वह तो न मालूम क्या-क्या सह चुका है! अतः इसे भी सह गया। हवाई जहाज ४ ता० की शाम को ४ बजे कलकत्ता पहुंच गया।

इधर तो पितृ-वियोग में यह दशा और उधर सरकार को अपनी ही धुन थी। करांची में तलाशी ले कर 'इण्डियन स्ट्रगल' आदि आपत्ति-जनक सामग्री छीन ही ली, अब कलकत्ते में जहाज से उतरते ही आप को पाबन्दियों में जकड़ दिया गया। 'न वहां किसी से मिल सकते हैं, न बातचीत कर सकते हैं और न पत्र-व्यवहार ही कर सकेंगे। अगर ऐसा हुआ तो सात वर्ष तक के लिये जेल में बन्द!' 'अच्छा सरकार' सुभाष के दिल ने कहा और गहरी सांस ली। हवाई अड्डे पर हजारों व्यक्ति अपने 'सरताज' के दर्शन और स्वागत करने आये हुये थे, किन्तु क्या मजाल कि कोई पास तक फटक सकता! पुलिस ने किसी से भी बात तक न करने दी और बन्द मोटर में, पहरे के साथ सीधा घर पहुंचा दिया, जहां कि वह नजरबन्द की तरह रह सकते थे।

सुभाष बाबू इस बन्दी दशा में ही अपने सारे मातमी कार-व्यवहार करते रहे, कोई भी कार्य ऐसा नहीं होने दिया, जिस पर शिकायत हो सकती। सरकार का ता० ८ को एक नया आर्डर

मिला कि 'एक सप्ताह के अन्दर-अन्दर ही यूरोप वापिस चले जाओ।' इस आज्ञा ने जले पर नमक का काम किया मगर 'मरीज' इसे भी सह गया और सरकार से पिता के श्राद्ध समय तक घर पर रहने की मांग की। यह मांग स्वीकृत हो गई। यही नहीं, बंगाल सरकार ने आप की स्वास्थ्य-परीक्षा के लिये एक मेडीकल बोर्ड भी नियत कर दिया, जिस में सर नीलरतन सरकार, लेफ्टीनेन्ट कर्नल वेरेहाज, डा० एल० एम० बनर्जी और श्री एण्डर्सन थे। आपकी परीक्षा कर ली गई। ता० १७ दिसम्बर को फिर एक्सरे कराने के लिये पुलिस के पहरे में कलकत्ता मेडीकल कालेज हस्पताल ले जाये गये। वहां ६ दिन रखने का प्रोग्राम था लेकिन आपको खाना और पीना छोड़ देने के कारण १६ ता० को ही वापिस घर पहुंचवा दिया गया। इस तरह सुभाष बाबू शोक-सन्तप्त परिवार में रहते हुये अपने दुःख को बंटाने के प्रयास में लगे और मां और भाइयों के साथ पारिवारिक सुख का आभास-मात्र ही ले पाये थे कि भारत सरकार ने जनवरी आते-आते आपको खटखटा दिया। भारत छोड़ने का फरमान मिल गया। सुभाष बाबू को आपरेशन कराना था अतः बिना ननुनच किये ८ जनवरी १९३५ को कलकत्ते से रवाना हो गये। बम्बई तक पुलिस का सख्त पहरा रहा ताकि किसी से मिल-जुल न सकें। आप ता० १० को विक्टोरिया जहाज से यूरोप के लिये विदा हो गये।

इसी बीच ता० ३० दिसम्बर १६३४ को बंगाल प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी के आप सभापति चुने गये ।

वीयना में आकर फिर आप पहले के ही मुताबिक अपने कार्यों में लग गये। इस बार बंगाल की दयनीय दशा ने आपके दिल पर कुछ ऐसा असर किया कि आप सरकार और कांग्रेस दोनों के ही विद्रोही-से बन गये। कांग्रेस द्वारा बंगाल की उपेक्षा और सरकार द्वारा तीव्र दमन ने उन्हें बेचैन कर दिया। इसलिये आपने ता० १ फरवरी को जेनेवा से प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी के द्वारा एक वक्तव्य में सरकार और कांग्रेस से एक-साथ युद्ध करने के लिये बंगालियों से अपील करते हुए कहा कि कांग्रेस ने बंगाल को प्रतिनिधित्व से वंचित कर रक्खा है और सरकार २००० से अधिक व्यक्तियों को नज़रबन्द किये हुए है। इसलिये हमें आपसी झगड़े मिटा कर एक हो जाना चाहिये। तभी हम सन्मान और अधिकार पा सकेंगे।

मार्च के प्रारम्भ में आप इटली रहे। वहां रोम में ६ ता० को अफ़ग़ानिस्तान के भूतपूर्व शाह अमानुल्ला से भेंट की और भारत के सम्बन्ध में घण्टों बातें करते रहे। मार्च के द्वितीय सप्ताह में वीयना में हुई वैज्ञानिकों की सभा में आपने भाषण दिया और बताया कि 'हमारा जो आन्दोलन है वह सिर्फ राजनैतिक सुधारों के ही लिये नहीं है, बल्कि सामाजिक सुधारों के लिये भी हम लड़ रहे हैं।" १६ मार्च को स्विटजरलैण्ड के ग्लांड-

सेनिटोरियम में स्व० विट्ठलभाईपटेल-स्मारक का उद्घाटन किया। इन्हीं दिनों आपने 'राष्ट्रीय संग्राम का इतिहास' नामक दूसरी पुस्तक भी लिखनी शुरू की थी। भारत में तब केन्द्रीय असेम्बली के निर्वाचन होकर कांग्रेसियों की जीत के हल्ले हो रहे थे। आपके भाई श्री शरतचन्द्र बोस भी असेम्बली के लिये निर्विरोध चुन लिये गये मगर बैठकों में आकर शामिल होने के लिये सरकार ने नज़रबन्दी से उन्हें नहीं छोड़ा। इस पर शरत् बाबू ने त्याग-पत्र दे दिया।

धीरे-धीरे आपका स्वास्थ्य अब इस योग्य हो रहा था कि आपरेशन की पीड़ा और उससे होने वाली कमजोरी को बर्दाश्त कर सकते। अतः २४ अप्रैल १९३५ के दिन, रूडोल्फीनर हाउस नामक हस्पताल में, अन्दरूनी रोगों के माने हुए डाक्टर प्रो० डेमिल द्वारा आपके पेट का आपरेशन सकुशल सम्पन्न हो गया। सुभाष बाबू चाहते थे कि आपरेशन की कमजोरी दूर हो जाने के बाद यूरोपियन देशों का दौरा करके भारत के पक्ष में प्रचार करें। लेकिन सरकार ने पाबन्दी लगाते हुए उत्तर दिया कि सैर के लिये तो जा सकते हैं पर राजनीतिक प्रचार नहीं कर सकते। जून में श्रीमती कमला नेहरू स्वास्थ्य-सुधार के लिये यूरोप आईं तो वीयना पधारने पर ४ जून को आपने उनका स्वागत किया। २६ जून को वीयना से कार्ल्सबाद (जेकोस्लोवेकिया) चले गये और वहां दो महीने ठहरे। वहीं आपने भारत पर एक पुस्तक भी

लिखी थी। २६ जुलाई को भारत में आपके भाई शरत् बाबू रिहा कर दिये गये।

दिसम्बर के अन्तिम सप्ताह में, देश-विदेश में सर्वत्र कांग्रेस की स्वर्ण-जयन्ती मनाई गई। भारत में उन दिनों खूब रौनक रही। सुभाष बाबू निर्वासित थे अतः उन्होंने वीयना में ही उस दिन हिन्दुस्तान एकेडमी असोसियेशन में भाषण देते हुए, कांग्रेस के प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की और एक संदेश भारत भेजा, जिसमें कहा कि "इस अवसर पर हमें उन राष्ट्रीय वीरों का अभिनन्दन करना चाहिये जिन्होंने कांग्रेस को आज के स्वरूप पर पहुंचाया है। भगवान हमें अधिक शक्ति दें ताकि हम तब तक अपने काम को जारी रख सकें जब तक विजय-लाभ न हो। और आइये, भूतकाल में हमने जो भूलें की हैं, उनमें सुधार कर लें। इस चिरस्मरणीय अवसर पर हमें भारत की स्वतंत्रता की वेदी पर आत्म-त्याग की प्रतिज्ञा को ताजा करना चाहिये।"

कांग्रेस की कार्यसमिति ने भारत के तात्कालिक राष्ट्रपति राजेन्द्र बाबू को शरत् बाबू की सलाह लेकर बंगाल प्रांतीय कांग्रेस कमेटी और कार्यसमिति के अस्थायी निर्माण का अधिकार दिया था। अतः आप लोगों ने २२ जनवरी १९३६ को चुनाव की जो घोषणा की उसमें प्रांतीय कांग्रेस का सभापति सुभाष बाबू को ही निर्वाचित किया।

यद्यपि आप पर पाबन्दी लगी हुई थी तो भी आप यूरोप के विभिन्न देशों में घूमते रहे। जनवरी १९३६ में आपने ब्रुसेल्स

और बर्लिन आदि का दौरा किया। उसके बाद फरवरी के प्रारम्भ में आप आयर्लैण्ड चले गये और वहां लगभग १५ दिन रहे। ३ फरवरी को डब्लिन में आयर्लैण्ड के भाग्य-विधाता डीवेलरा से मुलाकात की और अनेक महत्वपूर्ण विषयों पर वार्तालाप हुआ। डीवेलरा ने आपका जोरदार स्वागत किया था। वहां अनेक सभा-संस्थाओं का भी आप ने निरीक्षण किया।

(११)

सुभाष-दिवस

अप्रैल के द्वितीय सप्ताह में लखनऊ में कांग्रेस का अधिवेशन पं० जवाहरलाल नेहरू के सभापतित्व में होना तय हो चुका था। सुभाष बाबू की इच्छा हुई कि उसमें भाग लें। अतः आयर्लैन्ड से जिनेवा आकर आपने एक पत्र-प्रतिनिधि के भेंट करने पर अपनी यह इच्छा प्रकट करते हुये कह दिया कि मार्च के मध्य में मैं भारत वापिस जाने का विचार कर रहा हूं। एक और वक्तव्य में आप पं० जवाहरलाल नेहरू के साथ कांग्रेस-कार्य करने का भी विचार प्रकट कर चुके थे। इससे सरकार भौंचक-सी रह गई। उसे जवाहर-सुभाष के एक साथ मिलने में अशान्ति ही अशान्ति

दिखाई देने का भ्रम हो गया। फलस्वरूप ब्रिटेन के वैदेशिक मन्त्री ने वीयना के कौंसल द्वारा सुभाष बाबू को यह चेतावनी दे दी कि "यदि पत्रों में प्रकाशित समाचारों के अनुसार भारत लौटने का विचार सत्य है तो सरकार तुम्हें आजाद नहीं रहने देगी।"

दिल्ली में तब मार्च के तृतीय सप्ताह में कांग्रेस कार्यसमिति की बैठकें हो रही थीं। उस समय नेताओं ने लखनऊ कांग्रेस के अवसर पर सुभाष बाबू को प्रधान मन्त्री बनाने का विचार कर लिया था। लेकिन सरकार द्वारा लगाई पाबन्दी से एक दम विक्षोभ-सा फैल गया। भारत और भारत से बाहर सभी लोगों ने इस समाचार को खेद के साथ सुना। ब्रिटिश पार्लमेंन्ट में इस पर अनेक प्रश्नोत्तर हुए और एक सदस्य ने तो यहां तक कह दिया कि "क्या इस आदमी को सताने की भी कोई हद है?" इसी मामले को लेकर भारतीय व्यवस्थापिका सभा (असेम्बली) में जो बहस हुई थी, वह तो अपना खास स्थान रखती है। २३ मार्च को सुभाष बाबू के भारत-प्रवेश पर पाबन्दी के विरुद्ध श्री नीलकंठदास ने एक स्थगित प्रस्ताव पेश किया और कहा कि "श्री सुभाषचन्द्र बोस भारतमाता के यशस्वी पुत्र हैं। क्या सरकार उनके पं० नेहरू के साथ मिल जाने से डर गई है?" होम सेक्रेटरी मि० हैलेट ने उत्तर दिया- "सरकार कारण छिपाना नहीं चाहती। श्री बोस के स्वतन्त्र मनुष्य के रूप में भारत लौटने से केवल बंगाल को ही नहीं, समस्त भारत को खतरा है।" श्री बोस के गत जीवन की कहानी की बाबत आपने

बताया कि "दो जजों ने उनके इतिहास की जांच की थी। उनकी सम्मति में वह क्रान्तिकारी षड्यन्त्र के सदस्य रहे हैं और यदि उन्हें स्वतन्त्रता दे दी गई तो वह भारतवर्ष के लिये ख़तरनाक साबित होंगे। देश में उनकी स्थिति बहुत ऊंची है, उनमें संगठन की असाधारण योग्यता है और युवकों पर उनका अत्यधिक प्रभाव है। अतः सरकार उन्हें आज़ाद नहीं रख सकती।"

श्री अखिलचन्द्र दत्त वाइस प्रेजीडेएट असेम्बली तथा विरोधी पार्टी के नेता श्री भूलाभाई देसाई ने पूछा—'सरकार के पास प्रमाण हैं तो वह मुकद्दमा क्यों नहीं चलाती'? इसके बाद कानून-सदस्य सर एन० एन० सरकार और गृह-सदस्य सर हेनरी क्रेक ने भी वैसे ही जवाब दिये और कहा कि "श्री बोस का 'युगान्तर' नामक एक दल है, जिसकी शाखायें सारे देश में फैली हुई हैं। बीच-बीच में विदेश से आये सुभाष बाबू के पत्रों से प्रतीत होता है कि उनका उद्देश्य आयर्लैएड के युद्ध के तरीकों को अख़्त्यार करके भारत में हिंसात्मक क्रान्ति का आन्दोलन खड़ा करना था। सुभाष बोस जैसी योग्यता तथा बुद्धि के व्यक्ति को भारत में इस प्रकार के आन्दोलन चलाने की स्वतंत्रता देना ख़तरनाक मूर्खता होगी।" इस बहस के बाद वोट लेने पर सरकार की निन्दा का प्रस्ताव 'सुभाष बोस की जय' के बीच बहुमत से पास हो गया और असेम्बली स्थगित हो गई।

सुभाष बाबू के अनेक भारतीय और यूरोपियन मित्रों ने सरकारी पाबन्दी के बाद स्वास्थ्य के ख़तरे के कारण आपको

यही सम्मति दी कि आप भारत न आवें। लेकिन आपके दिल ने इस अन्याय को बर्दाश्त करने की गवाही न दी और आपने घोषित कर दिया कि सरकार के इस स्वेच्छाचारी हुक्म को हिकारत की नजर से देखता हुआ मैं, गिरफ्तारी का खतरा लेकर शीघ्र भारत पहुंचूंगा और २७ मार्च को ही 'काउण्ट वर्डे' जहाज द्वारा जिनेवा से भारत के लिये रवाना हो गये। सरकार तो सतर्क थी ही, उसने मार्ग में पोर्टसईद पर ही गिरफ्तार करने का प्रयत्न किया किन्तु इटालियन जहाज के कप्तान ने गिरफ्तार नहीं होने दिया। पोर्टसईद पर आप से मिलने मिस्री नेतागण आये हुए थे मगर पुलिस ने उन्हें भी नहीं मिलने दिया। ता० ८ अप्रैल को सुबह ६॥ बजे जहाज बम्बई पहुंचा। पुलिस जहाज पर ही गिरफ्तार करने दौड़ी किन्तु कप्तान ने डांट दिया और सुभाष बाबू थोड़ी देर जहाज के तख्ते पर ही खड़े-खड़े लोगों की पुष्प-मालायें लेते रहे। बाद में आपने देशवासियों को संदेश दिया कि 'स्वतंत्रता की पताका झुकने न देना'। और इसके बाद ज्योंही भारत-भूमि पर क़दम रक्खा कि बन्दी बना कर आर्थररोड-जेल भेज दिये गये।

आपकी गिरफ्तारी पर सर्वत्र सरकार की निन्दा की गई। विदेश के अलावा भारत के कोने-कोने में सभायें हुईं और सुभाष बाबू की वीरता की सराहना की गई। अनेक स्थानों पर हड़तालें भी हुईं। कांग्रेस के खुले अधिवेशन ने असन्तोष प्रकट किया और लखनऊ में आप कार्यसमिति के सदस्य निर्वाचित हुए।

बम्बई से थोड़े दिनों बाद आप पूना की यरवदा जेल भेज दिये गये, जहाँ २१ अप्रैल को आपके भाई शैलेन्द्रचन्द्र बोस ने पुलिस के पहरे में मुलाकात की। २२ अप्रैल को राष्ट्रपति नेहरूजी ने एक वक्तव्य निकाल कर भारतीयों से १० मई के दिन सुभाष-दिवस' मनाने की अपील प्रकाशित की। ६ मई को बम्बई के श्री के० एफ० नरीमान ने आप से जेल में भेंट की मगर पुलिस ने कोई भी राजनैतिक बात नहीं होने दी। १० मई को देश-भर ने शान से 'सुभाष-दिवस' मनाया और सर्वत्र सरकार से आपकी रिहाई के लिए मांग की गई।

यरवदा जेल में गर्मी और अकेलेपन के कारण आपका स्वास्थ्य खराब होने लगा तो सरकार बंगाल की किसी जेल में भेजने के सम्बन्ध में विचार करने लगी। २० मई को पं० जवाहरलाल नेहरू पूना के दौरे में, सुभाष बाबू से मिलने आ रहे थे कि १६ ता० को ही पुलिस की कड़ी निगरानी में आप यरवदा से कुरसियांग (बंगाल) भेज दिये गये और वहां अपने भाई श्री शरतचन्द्र बोस के मकान में ही नज़रबन्द करके रखे गये। शरत बाबू ने ३१ ता० को कलकत्ते से आकर आप से भेंट की और तब १॥ वर्ष बाद दोनों भाई गले गले मिले।

(१२)

बन्धन से मुक्ति

कुरसियांग में आ कर कुछ दिनों तो सुभाष बाबू ठीक रहे लेकिन फिर यहां भी हलका-हलका बुखार रहने लगा। अगस्त के प्रारम्भ में ज्ञात हुआ कि आपको अजीर्ण और खांसी की भी शिकायत हो आई है। कुछ समय यों ही बीता लेकिन जब स्वास्थ्य चिन्ताजनक होने लगा, तब १० सितम्बर को सर नीलरतन सरकार और प्रसिद्ध राजयक्ष्मा-विशेषज्ञ डा० के० एस० राय ने कुरसियांग में ही आपकी शरीर-परीक्षा की और सरकार को रिपोर्ट में लिख दिया कि "हम श्री बोस के स्वास्थ्य के बारे में अपनी राय कायम करने में असमर्थ हैं क्योंकि एक्सरे

के अभाव में हम उनकी अच्छी तरह परीक्षा नहीं कर सके। यदि उनके शरीर की पूरी परीक्षा आवश्यक समझी जाय तो उन्हें कलकत्ता भेज दिया जाय।" सुभाष बाबू का यहां आकर ७ पौंड वजन घट चुका था। डाक्टरों की रिपोर्ट के बाद भी सरकार ने करवट नहीं ली। लगभग एक महीना बाद ७ अक्तूबर को असेम्बली में जब सरकार को खटखटाया गया तब बताया गया कि 'सरकार श्री बोस का कलकत्ता या दार्जिलिंग ले जाकर इलाज कराना चाहती है।' अक्तूबर गया, नवम्बर भी बीतने को हुआ, मगर सरकार की 'चाहना' ने कार्य का रूप ग्रहण नहीं किया। फिर बंगाल कौंसिल में मामला छेड़ा गया और तब २५ नवम्बर को सरकार की ओर से टका-सा जवाब दे दिया गया कि 'डाक्टरों की रिपोर्ट सरकार प्रकाशित नहीं करना चाहती। न बंगाल सरकार उन्हें छोड़ना ही चाहती है और न उन पर खुली अदालत में मुकद्दमा चलाने को ही तैयार है।' अब तक सुभाष बाबू का १६ पौंड वजन घट चुका था। देश में इस पर हलचल मची और तब कहीं जाकर सरकार की १७ दिसम्बर को नींद खुली। सुभाष बाबू कुरसियांग से कलकत्ता मेडीकल कालेज लाये जा कर यूरोपियन वार्ड में रखे गये। ३० दिसम्बर को यहां आप की एक्सरे परीक्षा हुई और मालूम हुआ कि 'टौंसिलों' में गन्दगी बढ़ जाने के कारण पीप भर गई है। ५ जनवरी सन १६३७ में फिर एक्सरे परीक्षा हुई और वहीं विशेषज्ञ द्वारा चिकित्सा कराने की व्यवस्था कर दी गई। मगर लाभ कुछ नहीं

हुआ और २२ फरवरी तक यहां भी ६ पौंड वज़न और घट गया। इस प्रकार सुभाष बाबू इधर रोग से युद्ध करते रहे और उधर राजनैतिक वातावरण शान्त-सा होता चला आया।

सन् १९३७ के अप्रैल मास से नया शासन-विधान लागू होने वाला था। अतः उसके लिए प्रान्तीय असेम्बली और कौंसिलों के चुनाव जनवरी–फरवरी में होने थे। कांग्रेस ने अपने बम्बई-अधिवेशन में ही चुनाव लड़ने का निश्चय कर लिया था। केवल पद-ग्रहण की समस्या थी, जो लखनऊ और फैजपुर कांग्रेसों में भी हल न हो सकी। दोनों अधिवेशनों के सभापति पं० जवाहरलाल नेहरू थे, जो दोनों विचारों के कांग्रेसियों की तार मिलाये रहे। फैजपुर कांग्रेस के सभापति पद के लिए सुभाष बाबू का भी नाम कई प्रान्तों ने पेश किया था मगर नेहरू जी के हक में आपने अपना नाम वापिस ले लिया। कांग्रेस होने के बाद चुनाव की चहल-पहल शुरू हुई। सारे देश में खूब धूमधाम हुई और कांग्रेस को इसमें आशातीत सफलता मिली। ६ प्रान्तों में तो उसका निरपेक्ष बहुमत हो गया और ३ प्रान्तों में सब से बड़ी पार्टी कांग्रेसियों की रही। अब पद-ग्रहण का निर्णय करने के लिए दिल्ली में कांग्रेस-कन्वेन्शन की तैयारियां हुईं। मार्च के मध्य में दिल्ली में देशभर के कांग्रेसी नेताओं का जमघट हुआ। महात्मा जी भी सदल-बल हाजिर थे। कन्वेन्शन के निर्णय की ओर, क्या देश और क्या विदेश सभी जगह के राजनीतिज्ञों का ध्यान लगा हुआ था। भारत सरकार के आगे तो जीवन-

मरण जैसा सवाल था। कांग्रेस कार्यकारिणी में पहले मामला पेश हुआ और ज्योंही ता० १६ की शाम को पद-ग्रहण के पक्ष में निर्णय घोषित किया गया कि दूसरे ही दिन कलकत्ता में वह अनहोनी हुई, जिसकी कल्पना भी सुखद कही जा सकती है। मार्च की १७ तारीख और शाम के ७॥ बजे का समय! सुभाष बाबू अपनी रुग्ण माता से मिलने घर पर आये हुए थे कि खुफिया पुलिस के डिप्टीकमिश्नर मि० जोहन्स ने वहीं आपको मुक्ति का परवाना दे दिया। कुछ क्षण पूर्व का बन्दी एकदम बन्धन-मुक्त हो गया और सुभाष बाबू ने लगभग ५॥ वर्ष में अब स्वतंत्रतापूर्वक सांस ली।

आपकी रिहाई की खबर बिजली की तरह देश-विदेश में फैल गई। सब को इस आकस्मिक और अकल्पित घटना पर आश्चर्य हुआ। कांग्रेसी क्षेत्रों में एकदम आनन्दोल्लास उमड़ आया। शरत् बाबू ने टेलीफोन खटखटाया, जवाहरलाल जी ने तार ताना और गांधी जी ने अपना दूत ही रवाना कर दिया। मालवीय जी ने आशीर्वाद भेजा, फ्रांस के प्रख्यात साहित्य-सेवी मौ० जान हर्बर्ट ने बधाई दी और संसार-प्रसिद्ध रोम्यांरोलां ने शुभ-कामना प्रकट की। दिल्ली की जनता और कन्वेन्शन में आये कांग्रेसी कार्यकर्त्ता आपके दर्शनों को लालायित हो उठे। स्वागता-ध्यक्ष पं० इन्द्र जी ने स्वागत-सन्देश भेजा और राष्ट्रपति नेहरू जी ने निमंत्रण लिखा—'आपके मुक्त होने की खबर से अत्यन्त हर्ष हुआ। मुझे आशा है, कि यदि डाक्टर आपको आज्ञा दे दें

तो आप तुरन्त ही दिल्ली के लिए रवाना हो जायेंगे।' मगर डाक्टर ने यात्रा की थकान बर्दाश्त करने योग्य स्वास्थ्य न बताया और आप दिल्ली न आ सके। एक्सरे-परीक्षा के बाद आपको क्षय का रोग कायम किया गया, जिसका वहीं इलाज शुरू कर दिया गया। २९ मार्च को बंगाल प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी ने 'सुभाष दिवस' मनाया और ६ अप्रैल को कलकत्ता में आपका विराट् सार्वजनिक स्वागत किया गया।

(१३)

राष्ट्रपति के पद पर

स्वतंत्र होने पर सुभाष बाबू स्वास्थ्य-सुधार के साथ-साथ भारत की राजनैतिक दशा की नब्ज टटोलने में भी लगे। आपका ध्यान बंगाल की 'हक़'-सरकार के अर्थ-मंत्री श्री नलिनीरंजन सरकार द्वारा कांग्रेस से बग़ावत करने की ओर गया और आपने अनुशासन की कार्रवाई करा कर उन्हें २० वर्ष के लिए कांग्रेस से अलग करा दिया। २५ अप्रैल को डाक्टरों की सलाह से आप डलहौजी (पंजाब) के लिए रवाना हो गये। २६ ता० से 'आनन्द भवन' में कांग्रेस वर्किंग कमेटी की बैठकें थीं। अतः आप २६ को इलाहाबाद उतर पड़े और सन् ३१ के बाद से पहले-

पहल कांग्रेस कार्यकारिणी में भाग लिया। यहीं आपकी अन्य साथियों से भी भेंट हुई। महात्मा जी से मिलने का दृश्य तो अत्यन्त हृदयस्पर्शी था। आपको देखते ही गांधी जी ने हलकी चपत के साथ कहा—"जब से महादेव देसाई कलकत्ता में तुम से मिल कर आया है, मुझे क्षणभर भी कल नहीं पड़ी।" और एकदम विह्वल से हो अपने प्रेमपूर्ण आलिंगन में जकड़ लिया। सुभाष बाबू इससे अत्यन्त प्रभावित हुए। इलाहाबाद शहर और इसके बाद यात्रा में दिल्ली, अमृतसर और लाहौर आदि की जनता ने आपका प्रेमपूर्ण स्वागत किया तथा उसके अनुग्रह पर सर्वत्र सार्वजनिक सभाओं में आपको दर्शन देने भी आना पड़ा।

लाहौर में सुभाष बाबू डा० धर्मवीर के अतिथि रहे और वहां ८-१० दिन रह कर ११ मई को डलहौजी के लिये रवाना हो गये। आपने विदाई के समय एक मार्मिक वक्तव्य देते हुये कहा था—"प्रत्येक भारत-वासी का, चाहे वह किसी धर्म का अनुयायी हो, कांग्रेस में शामिल होना जन्म-सिद्ध अधिकार है। और हर व्यक्ति को इसमें आकर आजादी के युद्ध में अपना हक अदा करना चाहिये।" अपने बारे में आपने कहा कि "मैं देश-सेवा के लिये इस शरीर को जल्द से जल्द समर्थ बना लेने का ही प्रयत्न कर रहा हूं ताकि शीघ्र अपने स्थान पर आ डटूं।" डलहौजी पहुंच कर आप का स्वास्थ्य सुधरने लगा, लेकिन बीच-बीच में आपको टॉसिलाइटिस के दौरे भी होते रहे। डा० धर्मवीर ने काफी मनोयोगपूर्वक आपकी देख-रेख रक्खी और चारों ओर से ध्यान

हटा कर आराम करने की सलाह देते रहे। फिर भी आप से न रहा गया और वहां से समय-समय पर सन्देश तथा वक्तव्य निकालते रहे। २४ मई को लण्डन में होने वाली भारतीय नागरिक स्वतन्त्रता कान्फ्रेन्स और २ जून को दक्षिणी रियासत प्रजा परिषद् को सन्देश भेजे। ११ जून को एक वक्तव्य निकाला, जिसमें आपने बताया कि करांची में 'नेशनल कांग्रेस इण्डिपेण्डेण्ट पार्टी' बनाने के सिलसिले में जो मेरा नाम शामिल करने की खबर उड़ी है, वह निराधार है। मैं ऐसी किसी पार्टी से लाभ की आशा नहीं रखता और यदि कोई बने तो उसमें शामिल भी न होऊंगा।' २४ जून को इलाहाबाद नैनी जेल में भूख-हड़ताल करने वाले श्री शचीन्द्रनाथ बख्शी से हड़ताल तोड़ने का अनुरोध किया और ६ अगस्त को बंगाल सरकार से समस्त राजबन्दियों को एक साथ छोड़ देने की अपील करते हुये वक्तव्य दिया। इस बीच डलहौजी में मीरा बहन (मिस स्लेड) भी स्वास्थ्य-सुधार के लिये आईं और आप से मिलती-जुलती रहीं।

८ सितम्बर को कलकत्ता कारपोरेशन के एक उप-चुनाव में सुभाष बाबू निर्विरोध उसके आल्डरमैन (सदस्य) निर्वाचित हुए। आपने जब कारपोरेशन के विधान में आमूलचूल परिवर्त्तन करने सम्बन्धी सरकारी योजनाओं के बारे में सुना, तो ता० ३ अक्तूबर को एक पत्र-प्रतिनिधि को उत्तर देते हुये बोले — 'यदि हक़-सरकार का इरादा विधान को और अधिक जनतन्त्रवादी

तथा सोशलिस्ट बनाने का है, तब तो हम स्वागत करेंगे अन्यथा सरकार को उस अभूतपूर्व विरोध का सामना करना होगा कि याद रहे। अतः हक़-सरकार गड़बड़ी करने की हिम्मत न करे।' अक्तूबर के प्रारम्भ तक आपके वजन में कुल ७ पौंड वृद्धि हो पाई लेकिन वैसे तबियत ठीक हो गई। डाक्टर ने ५-६ सप्ताह तक आराम करने की और सलाह दी मगर आप कलकत्ता में होने वाली अ० भा० कांग्रेस कमेटी की बैठकों की तैयारी के लिए ५ अक्तूबर को ही डलहौजी से चल दिये और ७ ता० को कलकत्ता पहुंच गये। स्टेशन पर जनता ने आपका स्वागत किया। वहां से आप कुरसियांग गये और लगभग एक पखवाड़े बाद फिर कलकत्ता आ गये।

महात्मा गांधी भी २६ ता० को कलकत्ता पहुंचे और शरत्-बाबू के मकान पर ही ठहरे। इस बार महात्मा जी ने बंगाल-सरकार और गवर्नर से मिल-मिला कर नजरबन्दों की रिहाई के लिए, खूब कोशिश की और सफल हो गये। लेकिन आपको वहां काफी दिन ठहरना पड़ा। अतः बोस-परिवार से खूब घनिष्ठता बढ़ गई। वापिसी पर महात्मा जी ने बोस-बन्धुओं के सौजन्य की खूब सराहना की थी। इस प्रकार महात्मा जी और सुभाष बाबू एक-दूसरे के निकट ही होते आये। देश में तब तक हरिपुरा (गुजरात) में होने वाले कांग्रेस के ५१वें अधिवेशन के लिए सभापति की तलाश होने लगी थी। तपस्वी सुभाष की ओर लोगों की आंखें उठना स्वाभाविक ही थीं। अतः पारस्परिक

विचारों और पत्रों में आप के नाम की सिफारिशें होने लगीं। महात्मा गांधी ने भी इस सुझाव को पसन्द किया। लेकिन सुभाष बाबू का स्वास्थ्य अभी ऐसा नहीं हो पाया था कि वह किसी सार्वजनिक कार्य की जिम्मेवारी को झेल सके। अतः आप १८ नवम्बर को डच हवाई जहाज से वेडगैस्टीन (आस्ट्रिया) के लिए रवाना हो गये और वहां लगभग १॥ महीना तक स्नान-चिकित्सा द्वारा स्वास्थ्य लाभ किया। पश्चात् इंगलैंड के दौरे के लिए चल पड़े और १० जनवरी सन् १९३८ के दिन लण्डन पहुंच गये। विक्टोरिया स्टेशन पर लगभग पौन दर्जन विभिन्न संस्थाओं के सैकड़ों व्यक्तियों ने 'सुभाष बोस जिन्दाबाद' के नारों के साथ आपका हार्दिक स्वागत किया। आप वहां १९ ता० तक रहे और विभिन्न स्थानों की बीसियों सभाओं में भाषण दिये, जिनके द्वारा भारत की वर्त्तमान राजनैतिक दशा को स्पष्ट रूप से लोगों को समझाया। आपने अनेक पार्लमेंट के सदस्यों, लार्डों एवं भारतीय राजनीति से दिलचस्पी रखने वाले व्यक्तियों से बातचीतें कीं और फेडरेशन के सम्बन्ध में कांग्रेस की नीति को खुले रूप में सब के सामने प्रकट किया। आप वहां वर्त्तमान आयर्लैंड के सूत्रधार श्री डी-वेलरा से भी दो बार मिले और घन्टों बातचीत करके एक-दूसरे के विचारों को समझने का प्रयत्न किया। इस बीच भारत में १६ जनवरी को कांग्रेस के सभापति का नियमानुसार चुनाव हो गया। देश के सभी प्रांतों ने एक स्वर से सुभाष बाबू के ही नाम की सिफारिश की। फलस्वरूप आप सर्व-

सम्मति से भावी राष्ट्रपति घोषित कर दिये गये। जब यह खबर लण्डन पहुंची तब आप एक विराट् सभा में उपस्थित थे। लोगों ने समाचार सुनते ही जोरों की करतलध्वनि की।

इंगलैण्ड में आपने अपना आत्म-चरित्र तैयार किया और अधूरा ही प्रकाशक को देकर तथा अन्य कार्य समाप्त कर सुभाष बाबू १९ जनवरी को हवाई जहाज से रवाना हो गये और २३ को करांची आ पहुंचे। हवाई अड्डे पर स्थानीय जनता ने हजारों की संख्या में इकट्ठी होकर सर्वप्रथम अपने भावी राष्ट्रपति का स्वागत किया। यहां एक मजेदार बात भी हुई। एक पत्र-प्रतिनिधि ने कुंवारे सुभाष बाबू से सवाल कर दिया कि 'अपनी शादी के सम्बन्ध में आपके क्या विचार हैं?' तो आप तपाक से बोले 'मुझे इस बात के सोचने की फुरसत ही नहीं है।' यहां से आप जोधपुर पहुंचे। स्थानीय जनता ने आपके स्वागत की अभूतपूर्व तैयारियां की हुई थीं। मगर रियासत की ओर से, जहाज से उतरते ही आप पर पाबन्दियां लगा दी गईं। फिर भी लगभग २० सहस्र जनता ने नगर में आपका शानदार स्वागत किया। सभा में अनेक मान-पत्र भी भेंट किये गये, जिनका यथोचित उत्तर देकर आप कलकत्ता के लिए रवाना हो गये।

२४ जनवरी को ११ बजे का समय था, जब आप दमदम के हवाई अड्डे पर जहाज से उतरे। बंगाली तो आज फूले न समाते थे। अपने हृदय-सम्राट् के स्वागत के लिए हजारों व्यक्ति अड्डे पर पहले ही पहुंच गये। बूढ़ी मां की प्रसन्नता का क्या

ठिकाना ! उसका लाड़ला सपूत आज 'राष्ट्रपति' बन कर आरहा है। वह भला, घर कैसे रुक सकतीं ! अपने लाल को शीघ्र ही छाती से लगाने, वह भी अड्डे पर आ पहुंची। लेकिन बाहर वालों से ही वहां छुट्टी पाना मुश्किल हो गया। जैसे-तैसे बड़ी कठिनाई के बाद भीड़ से निकाल कर आपको प्रतीक्षित माता तक पहुंचाया गया। पुत्र ने चरण छुए; मां ने छाती ठंडी की और आशीर्वाद की झड़ी लगा दी। नगर में भी अनेक स्थानों पर आपका स्वागत किया गया। महात्मा गांधी ने तार से आशीष भेजा, बंगाल के वृद्ध नेता श्री हरदयाल नाग ने स्वागत-उद्गार प्रकट किये तथा अन्य अनेक व्यक्तियों ने श्रद्धांजलि समर्पित की।

५-६ दिन तक आप कलकत्ते में ही रहे और लोगों से भेंट-मुलाकात करते रहे। संसार की अनेक क्रान्तियों में भाग लेने वाले श्री एम० एन० राय तथा बंगाल-सरकार के अर्थ-मंत्री श्री नलिनीरंजन सरकार से भी आपकी बातचीतें हुईं। नजरबन्दों और राजनैतिक कैदियों की रिहाई की समस्या को सुलझाने का प्रयत्न किया। ता० २६-३० को विष्णुपुर में होने वाले बंगाल-प्रान्तीय राजनैतिक सम्मेलन में सम्मिलित हुए और वहां से वापिस होते ही वर्धा में ३ फरवरी को होने वाली कार्यसमिति में भाग लेने के लिए चल दिये। इस बैठक में हरिपुरा कांग्रेस में पेश होने वाले प्रस्तावों पर विचार किया गया।

हरिपुरा (गुजरात) में कांग्रेस की चहल-पहल ता० १० फरवरी से ही प्रदर्शनी के उद्घाटन के साथ शुरू हो रही है।

स्वागत-समिति की ओर से इस अधिवेशन को अभूतपूर्व बनाने के लिए अनेक प्रयत्न हो रहे हैं। ७॥ लाख रुपयों का बजट स्वीकार किया गया है। सभापति के जलूस के लिए सोने-चांदी से सज्जित एक रथ मंगाया गया है। सुभाष बाबू इसी में विराजमान होकर भारतीय 'महाराजा' का सन्मान प्राप्त करेंगे।

इस प्रकार आज आप हर दृष्टि से शानदार सफलता प्राप्त करते हुए देश का नेतृत्व अपने हाथ में समेट रहे हैं। वास्तव में आप पूर्ण विजयी कहे जा सकते हैं। सुभाष बाबू उन सिद्धान्तों के प्रतिनिधि हैं, जो समय के अनुसार भारत के लिए सर्वमान्य हो रहे हैं।

* ओ३म् शम् *

परिशिष्ट

(१)

राष्ट्र की विभिन्न समस्यायें

सन् १९२८ में महाराष्ट्र प्रान्तिक कांग्रेस के छठे अधिवेशन के सभापति पद से श्री सुभाषचन्द्र बोस ने जो भाषण दिया था, उसके कुछ आवश्यक अंश यहां दिये जाते हैं। पाठक देखेंगे कि ९ वर्ष पूर्व श्री बोस ने जो विचार प्रकट किये थे, उनमें आज भी ताज़गी है।

राष्ट्रीयता बनाम अन्तर्राष्ट्रीयता

राष्ट्रीयता को सांस्कृतिक अन्तर्राष्ट्रीयता की दृष्टि से संकीर्ण, स्वार्थपूर्ण और आक्रामक बताया जाता है। यह कहा जाता है

कि राष्ट्रीयता राष्ट्रों की सांस्कृतिक एकता के रास्ते में रुकावट है। लेकिन मैं यह कहना चाहता हूं कि भारतीय राष्ट्रीयता न संकीर्ण है, न स्वार्थपूर्ण और न हीं आक्रामक। वह मानव जाति के उच्च आदर्शों — सत्यम्, शिवम्, सुन्दरम् से ओत-प्रोत है। भारत की राष्ट्रीयता ने हमारे अन्दर सचाई, ईमानदारी, मानवीयता तथा सेवा व त्याग की भावना भर दी है। इसके अलावा इसने हम लोगों की प्रसुप्त शक्तियों को जगा दिया है। फलतः भारत के कला-क्षेत्र में नई जागृति दिखाई देती है। स्वतन्त्रता-रूपी प्राण के जादू-भरे स्पर्श के बिना हमारी संस्कृति और कला की न जाने क्या दशा हो जाती!

* * * *

मेरी सम्मति में राष्ट्रीयता कला और संस्कृति के विकास को रोकने के बजाय उसको प्रोत्साहन देने वाली है। इसके अतिरिक्त हम अपनी भारतीय कला और संस्कृति को अपने प्राचीन आदर्शों के अनुरूप स्वतन्त्र रूप से तभी विकसित कर सकते हैं जब हमें विदेशी राज्य और विदेशी आदर्शों व तर्ज-तरीकों से मुक्ति मिल जाय।

* * * *

राष्ट्रीयता पर एक दूसरा हमला अन्तर्राष्ट्रीय कम्यूनिज्म के आधार पर किया जाता है। यह हमला न सिर्फ मूर्खतापूर्ण है बल्कि अनजान में हमारे विदेशी शासकों को फायदा पहुंचाता है। यह तो राह चलता भी समझ सकता है कि हमें नये आधार

पर, चाहे वह आधार साम्यवाद हो या कोई और, भारतीय समाज का पुनर्निर्माण करने के लिये पहिले अपने भाग्य को बनाने का अधिकार तो मिल जाना चाहिये। जब तक भारत ब्रिटेन के चरणों को पूजता रहेगा वह अधिकार हमें नहीं मिल सकता। इसलिये न सिर्फ राष्ट्रीय लोगों का बल्कि अराष्ट्रीय कम्यूनिस्टों का भी यह फर्ज है कि वे जल्दी से जल्दी भारत के लिये आजादी प्राप्त करें। सामाजिक व आर्थिक पुनर्निर्माण की समस्या पर विचार तो आजादी मिलने के बाद होगा। जहां तक मेरा ख्याल है, अन्य देशों के कम्यूनिस्टों की भी यही राय है। श्रेणी युद्ध की बातें करके जनता में फूट फैलाने की कोशिश करना इस समय राष्ट्र के हित की दृष्टि से पाप है। अपनी राष्ट्रीय संस्कृति का विकास और भारत की स्वतन्त्रता के लिये काम करके हम वस्तुतः भारत को अन्तर्राष्ट्रीयता के ही योग्य बना रहे हैं। मुझे तो भारत संसार का ही एक छोटा-सा रूप दिखाई देता है। उसके जरिये संसार की समस्या समाधान का यत्न कर रही है। जब भारत में संस्कृतियों और स्वशासित प्रांतों के संघ का मेल पूर्ण रूप से हो जायगा तब भारत सब राष्ट्रों के सामने नये आदर्श के रूप में प्रकट होगा।

* * * *

मुझे इसमें जरा भी सन्देह नहीं है कि हम भारत को आर्थिक बन्धनों से तभी मुक्त कर सकते हैं जब वह राजनीतिक दृष्टि से स्वतंत्र हो जाय। इसीलिये मेरा यह विश्वास है कि जो लोग

भारत का आर्थिक उद्धार चाहते हैं उन्हें कांग्रेस में शामिल होकर पहिले भारत को विदेशी शासन से स्वतंत्र कराना चाहिये।

खादी

यदि हम कांग्रेस का पिछले कुछ वर्षों का प्रोग्राम देखें तो मालूम होगा कि हम खादी द्वारा ही जनता को कुछ दे सके हैं। खादी ने भारत के हजारों लोगों को भोजन दिया हैं। पूंजी और संगठन चाहिये, खादी के लिये बहुत विशाल क्षेत्र पड़ा है। भारत के लाखों भूखे लोगों को खादी जीविका दे सकती है।

भारत का ध्येय 'पूर्ण स्वतंत्रता'

मैं तो स्वतंत्र संघीय प्रजातंत्र का पक्षपाती हूं। मेरी दृष्टि में तो यही हमारा परम ध्येय है। मैं चाहता हूं कि भारत प्राचीन काल की तरह अपने भाग्य का विधाता स्वयं हो ताकि वह अपनी राष्ट्रीय योग्यता के अनुसार विकास कर सके। मैं भारत की पूर्ण बंधनहीन स्वतंत्रता चाहता हूं, जिससे वह संसार के स्वतंत्र राष्ट्रों में सिर उठा कर खड़ा हो सके। मैं चाहता हूं भारत को पूर्ण स्वतंत्रता का आनन्द प्राप्त हो, ताकि उस आनन्द से वह अपने और विश्व के लिये महान् कार्य कर सके। मैं चाहता हूं कि भारत का अपना झंडा हो, अपनी जल व स्थल सेना हो तथा स्वतंत्र राजधानियों में अपने स्वतंत्र राजदूत हों। स्वतंत्रता ही मेरा अन्तिम लक्ष्य है। स्वतंत्रता इतनी मूल्यवान है कि उसका मूल्य नहीं आंका जा सकता। मनुष्य को आत्मा के लिये स्वतंत्रता

उतनी ही आवश्यक है जितनी फेफड़ों के लिये प्राणवायु। स्वामी विवेकानन्द ने ठीक ही कहा था—"स्वतंत्रता आत्मा का संगीत है।" स्वतंत्रता इस भूलोक का वास्तविक अमृत है।

* * * *

भारतवासी पूर्वी जाति के हैं। भारत और ग्रेट ब्रिटेन में कोई भी ऐसी समानता नहीं है जिससे हम यह सोच सकें कि ब्रिटिश साम्राज्य के अन्तर्गत औपनिवेशिक स्वराज्य ही भारत का लक्ष्य हो! भारत को तो ब्रिटिश साम्राज्य में रहने से नुकसान ही है। ....जबतक हम ब्रिटिश साम्राज्य में रहेंगे तबतक हम अंग्रेज़ों के शोषण से नहीं बच सकते।

* * * *

भारत ब्रिटेन की मदद के बिना अपनी रक्षा नहीं कर सकता यह युक्ति निकम्मी है। यदि भारत अपनी सीमा से बाहर तिब्बत, चीन, मेसोपोटामिया, पर्शिया तथा मिस्र आदि में इंगलैंड के लिये युद्ध लड़ सकता है तो वह विदेशी आक्रमण से अपनी रक्षा भी कर सकता है।

समान अधिकार

स्वतन्त्रता प्राप्त करने का प्रयत्न करते हुये हमें इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि समाज के सब व्यक्तियों को यहां तक कि स्त्रियों को भी समान-अधिकार मिलें। यदि हम भारत को वस्तुतः महान बनाना चाहते हैं तो हमें राजनीतिक प्रजातन्त्र को

लोकसत्तात्मक समाज की भित्ति पर खड़ा करना होगा। जन्म-जाति या विचार-मूलक भेदभाव दूर करके सब को धर्म व मज़हब का ख्याल न करते हुये समान अवसर प्रदान करना होगा। स्त्रियों की स्थिति भी ऊंची करनी होगी। यह जरूरी नहीं कि हम यूरोप के ही स्त्री-आन्दोलन की नकल करें।

आर्थिक पुनर्निर्माण

प्रजातन्त्र या समाजवाद (कम्यूनिज्म) की ओर कदम बढ़ाने से पूर्व हमें अपने इतिहास को समझ लेना चाहिये। मैं कार्ल-मार्क्स के उत्साही अनुयायियों को यह स्मरण कराना चाहता हूं कि रूस में स्थापित साम्यवाद उससे भिन्न है, जिसकी कार्लमार्क्स ने शिक्षा दी थी। दूसरे भारत में मुख्य समस्या श्रम की नहीं अपितु भूमि की है। हम देखते हैं कि रूस में भी अभी भूमि-समस्या हल नहीं हुई। वहां भूमि पर किसानों का स्वामित्व अभी तक विद्यमान है। इसलिये भारत के आर्थिक पुनर्निर्माण के लिये हमें कौन-सा रास्ता पकड़ना चाहिये इसका निश्चय करने के लिये परीक्षणों की जरूरत है।

साम्प्रदायिक समस्या

भारत भिन्न २ धर्मों और संस्कृतियों की भूमि है। हमें इस प्रकट विभिन्नता में मौलिक एकता की तलाश करनी होगी। परमात्मा ने विभिन्न प्रान्तों को मिलाने की संसार की समस्या को हल करने का काम भारत के ही सुपुर्द किया है।

भारत में सब धर्मों के लिये स्थान है। सब धर्मों के लिये यह जरूरी है कि, वे एक दूसरे के रीतिरिवाजों, आदर्शों और इतिहास से परिचय प्राप्त करें। क्योंकि सांस्कृतिक मेल ही साम्प्रदायिक शांति व एकता का रास्ता तैयार कर सकता है। मेरी सम्मति में विभिन्न सम्प्रदायों की राजनीतिक एकता का मूलभूत आधार सांस्कृतिक एकता ही है।

सांस्कृतिक एकता स्थापित करने के लिये आर्थिक तथा वैज्ञानिक शिक्षा जरूरी है। धर्मान्धता का इलाज आर्थिक शिक्षा से बढ़ कर दूसरा कोई नहीं। इस प्रकार की शिक्षा से हमारी आर्थिक चेतनता जागृत होगी। आर्थिक चेतनता के बाद धर्मान्धता ठहर नहीं सकती। एक हिन्दू किसान और मुस्लिम किसान के बीच एक मुस्लिम किसान व एक मुस्लिम जमींदार की अपेक्षा अधिक समानता है। सर्वसाधारण को एक बार यह बता देने की जरूरत है कि उनका हित किस में है, फिर वे साम्प्रदायिक नेताओं के हथकण्डों में नहीं आयेंगे।

युवक आन्दोलन

इस देश के युवकों में जागृति शुरू हो गयी है, जो बहुत आशाजनक लक्षण हैं। हमें इस युवक आंदोलन को खूब प्रोत्साहन देना चाहिये। यदि आप मनुष्य के दिव्य गुणों या प्रसुप्त शक्ति को जगाना चाहें तो उसमें स्वतन्त्रता की आकांक्षा पैदा कर दीजिये। स्वतंत्रता की आकांक्षा सब प्रकार की स्फूर्तियों

तथा विधायक शक्तियों का स्रोत है। जब आदमी पर आजादी की अभिलाषा का नशा छा जाता है तब उसके लिये संसार इस प्रकार बदल जाता है जैसे वसन्त के जादूबल से प्रकृति। तब हमें उसके चामत्कारिक व्यक्तित्व और प्रभावशाली शक्ति को देख कर अचम्भा होने लगता है।

बन्धुओ, मैं आपसे प्रार्थना करूंगा कि आप युवक-आंदोलन के संगठन को बढ़ायें। आत्म-चैतन्य युवक न सिर्फ कार्य करेगा वरन् स्वप्न भी लेगा; सिर्फ विध्वंस ही नहीं करेगा, निर्माण भी करेगा।

वह वहां भी सफल हो जायगा जहां आप असफल रहे हैं, वह आपके लिये भूतकाल की असफलताओं कमज़ोरियों और अनुभवों में से एक नवीन और स्वतन्त्र भारत उत्पन्न कर देगा। यदि हम भारत को धर्मान्धता और साम्प्रदायिकता से छुड़ाना चाहते हैं तो हमें युवकों में कार्य शुरू कर देना चाहिये।

क्या हम स्वराज्य के योग्य हैं?

हमारे दयालु महाप्रभु और स्वयंभू उपदेशक हमें रोज कहते हैं कि हम स्वराज्य के योग्य नहीं हैं। कुछ कहते हैं कि स्वतन्त्रता प्राप्त करने से पूर्व हमें अभी और शिक्षा की जरूरत है; कुछ की राय में राजनीतिक स्वतन्त्रता से पहिले सामाजिक सुधार जरूरी है। दूसरे कहते हैं औद्योगिक विकास के बिना हिन्दुस्तान स्वराज्य के योग्य नहीं हो सकता। इन में एक भी बात सच नहीं है।

वास्तव में सच तो यह है कि बिना राजनीतिक स्वतन्त्रता के — बिना स्वभाग्य निर्णय का अधिकार मिले — न हम शिक्षा-प्रसार कर सकते हैं न सामाजिक सुधार और न ही उद्योग-विस्तार कर सकते हैं। जब हम अपनी प्रजा के लिये शिक्षा की मांग करते हैं जैसा कि बहुत समय हुआ, गोखले ने की थी, तो जवाब मिलता है कि धन नहीं है। अगर हम सामाजिक-सुधार के बिल पेश करते हैं तो अटलांटिक के उस पार रहने वाले मिस मेयो के भाई, पुराणपन्थियों से मिल कर हमारे विरुद्ध खड़े हो जाते हैं। जब हम भारत की आर्थिक और औद्योगिक उन्नति के लिये जान लड़ा कर काम शुरू करते हैं तो सरकार का इम्पीरियल बैंक, रेलवे तथा स्टोर डिपार्टमेंट हमारे राष्ट्रीय साहस में सहायता देने से इंकार कर देते हैं। हम अपनी म्युनिसिपैलिटियों और कौंसिलों में मद्य-निषेध के पक्ष में प्रस्ताव पास करते हैं तो सरकार की उपेक्षा और विरोध चट्टान बन कर सामने खड़ा हो जाता है। हम अकाल-ग्रस्त इलाके में काम करना चाहते हैं तो देखते हैं कि खाद्य द्रव्यों का निर्यात रोकना असम्भव है चाहे सारे देशवासी भूखों मर जायं।

मुझे इसमें रत्ती भर भी सन्देह नहीं है कि हमारे दुःखों का एक-मात्र इलाज स्वराज्य है। स्वराज्य की योग्यता की एक मात्र कसौटी है हमारी आजादी की अभिलाषा। जिस क्षण हमारे लोगों में यह अभिलाषा जागृत हो जायगी, परतन्त्रता की जंजीरें टुकड़े २ हो जायेंगीं। भारत में ब्रिटिश राज्य हमारे ही

लोगों के कारण टिका हुआ है। ब्रिटिश जनता की बहुत बड़ी संख्या को जीविका इस कारण मिल रही है कि हम उनके माल का इस्तैमाल करते हैं। हम अपना सहयोग का हाथ खींच लें, ब्रिटिश माल खरीदना छोड़ दें; बस, नौकरशाही धड़ाम से गिर जायेगी। लेकिन असहयोग और राष्ट्रीय बायकाट तभी सम्भव है जब हम में राष्ट्रीय आकांक्षा जागृत हो जाय।

मुकाबले की सरकार

सरकार ने अपनी संस्थाओं का जाल तमाम भारत में बिछा रक्खा है, जिन पर बड़े-बड़े अफसर नियुक्त हैं। नौकरशाही की शक्ति के यही दुर्ग हैं और उन्हीं के द्वारा उसने लोगों के दिल पकड़ रखे हैं। उन शक्ति के दुर्गों पर हमला करने के लिये हमें उनके मुक़ाबले में संस्थायें खड़ी कर देनी चाहियें। हमने अनुभव से देखा है कि जिस ज़िले की कांग्रेस कमेटी संगठित है, वहां बिना किसी तकलीफ के हम स्थानीय संस्थाओं पर कब्ज़ा करने में कामयाब हो गये। इसलिये कांग्रेस आफिस ही हमारे गढ़ का काम करेंगे, जहां से हम सरकार के दुर्गों पर हमला किया करेंगे। कांग्रेस कमेटियां हमारी सेना हैं। लेकिन कोई भी युद्ध तब तक नहीं जीता जा सकता जबतक मजबूत, योग्य और अनुशासित सेना न हो।

* * * *

हमारे युद्ध का कार्यक्रम दोहरा होना चाहिये। एक तो जनता में राजनीतिक प्रचार — जिसमें खादी, अस्पृश्यता-निवारण तथा

मद्य-निषेध आदि का प्रोग्राम भी शामिल होगा, दूसरे स्थानीय संस्थाओं और लेजिस्लेचरों पर कब्जा। पहिले प्रकार के प्रोग्राम से हमें शक्ति के दुर्गों पर कब्जा करने में मदद मिलेगी तथा दूसरे से देश के बाकी कार्य में, चाहे वह रचनात्मक हो या विध्वंसक, दृढ़ता लायी जा सकेगी।

यदि हम कांग्रेस कमेटी के संगठन या युद्ध की साधारण योजना की उपेक्षा करेंगे तो देश में राजनीतिक मान्द्य पैदा हो जायगा। जब मन्दी का दौरदौरा हो तब बड़े कानून भी प्रतिक्रिया नहीं कर सकते। हमें यह याद रखना चाहिये कि ब्रिटिश-माल के बायकाट आदि के प्रोग्राम एक प्रकार से युद्ध के मोरचे हैं और उन्हें जीतना तभी सम्भव है जब सेना ठीक और योग्य हो। राष्ट्रीय फौज की कार्यदक्षता कायम रखने के लिये हमें जनता में विरोध तथा मुकाबले की भावना बनाये रखनी होगी। मुकाबले की यह भावना हमारे राष्ट्रीय उत्साह को मन्द नहीं होने देगी तथा देश के स्थानीय संस्थाओं व लेजिस्लेचरों के कार्यों में प्रोत्साहन देगी।

* * * *

विरोध के वातावरण के बिना रचनात्मक कार्य या अन्य किसी दिशा में सफलता प्राप्त करना असम्भव है। लेकिन हम इस आधारभूत नियम को भूल जाते हैं। 'असहयोग निरर्थक है'—'विरोध निष्फल सिद्ध हो चुका है'—इन बातों के कहने से जनता धोखे में आ जाती है। हमारे चरित्र में सब से बुरी बात यह है

कि हम आगे की ओर नहीं देखते। हम असफलताओं से बड़ी जल्दी घबरा जाते हैं। हम में 'जानबुल' का सा प्रबल धैर्य नहीं है, इसीलिये हम उसकी तरह हारती हुई लड़ाई को नहीं जीत सकते। हम यह अनुभव नहीं करते कि यूरोपीय महायुद्ध में फ्रांस की एक छोटी सी सेना का ही धैर्य था कि बीच में निराशाजनक स्थिति उत्पन्न हो जाने पर भी अन्त में मित्र राष्ट्रों की जीत हुई। इसीलिये मैं कहता हूं कि धैर्यपूर्वक सरकार का विरोध करते जाइये, अन्त में वह कभी व्यर्थ नहीं जा सकता। राष्ट्रीय-आंदोलन का मनोवैज्ञानिक आधार यही है। इतिहास में विरोध के ही द्वारा राष्ट्रीयता के सिद्धांत की तूती बजती रही है। निरन्तर धैर्यपूर्वक बाधायें डालते हुए ही हम नौकरशाही के प्रति विरोध का वातावरण कायम रखने और वह शक्ति प्राप्त करने में समर्थ हो सकते हैं जिसका अभाव हमारे पतन और गुलामी का कारण है। एक दुर्बल पराधीन जाति लम्बे विरोध के सिवा और किस तरीके से अपना नैतिक मेरुदंड मजबूत कर सकती है?

ग्राम-संगठन

राजनीतिक युद्ध के साथ-साथ यह आवश्यक है कि हम में से कुछ ग्रामसंगठन का भी कार्य करें। भारत जैसे विशाल देश में जहाँ राष्ट्रीय जीवन के इतने अधिक विभाग हैं, सब लोगों को अपनी-अपनी रुचि के अनुसार भिन्न-भिन्न काम करने की गुंजायश है। यदि विध्वंस और निर्माण राजनीतिक प्रचार के साथ

इकट्ठे नहीं चलेंगे तो हम नष्ट हुई वस्तुओं की जगह नयी कुछ नहीं बना सकेंगे। ग्राम-कार्य में हमारा आदर्श यह होना चाहिये कि गांव सब कार्य स्वयं करें तथा पारस्परिक आदान-प्रदान और सहयोग द्वारा सब की आवश्यकतायें पूरी हो जायं। केवल मात्र-परोपकार, चाहे वह परोपकार सरकार की तरफ से हो या जमींदार व किसी दानी की तरफ से, हमारे दुःखों का अन्त या आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं कर सकता। अन्त में हमें आत्म-निर्भर होना सीखना ही पड़ेगा। पारस्परिक सहयोग से हम अपनी आर्थिक स्थिति सुधार सकते हैं तथा निरक्षरता-निवारण, व सामाजिक सुधार करके अपने घरों को सुख-समृद्धि और सौंदर्य का आवास बना सकते हैं।

* * * *

आवाहन

बन्धुओ, आज हम अपने राष्ट्र के इतिहास में बड़ी नाजुक मंजिल पर पहुंच गये हैं। हमें चाहिये कि हम अपनी सब शक्तियों को एक करके विरोधी ताकत का मुकाबला करें। हमारा मतभेद उतनी बातों पर नहीं जितनी पर मतैक्य है। आइये, हम उन बातों को भूल जायं जिन पर हमारा मतभेद है और सिर्फ उन्हीं बातों पर ध्यान रखें जिन पर हमारा ऐकमत्य है। शेक्सपीयर ने जैसा कहा था, मनुष्य जीवन में एक लहर आती है जो बाढ़ के समय उसे सम्पदा की ओर ले जाती है। इस समय हम पूरं

ञ्वार में हैं, हमें यह स्वर्गीय अवसर हाथ से नहीं जाने देना चाहिये। हम पहिले की अपेक्षा, यहां तक कि १९२१ से भी ज्यादा मज़बूत हो गये हैं। कम से कम मेरा तो यही विश्वास है। आइये, हम कंधे से कंधा भिड़ा कर खड़े हो जायं तथा एकचित्त और एक स्वर से कहें, जैसा कि टेनीसन ने यूलीसस के मुख से कहलाया था, कि हमारा मूलमंत्र है—'यत्न करेंगे, खोजेंगे, शोध में रहेंगे, लेकिन हार नहीं मानेंगे।' हम एक महान् विरासत के उत्तराधिकारी हैं। हमें लोकमान्य और देशबन्धु के स्वप्न विरासत में मिले हैं, हमें उनको कार्य-परिणत करना होगा। भारत फिर स्वतंत्र होगा इसमें मुझे रंचमात्र भी शक नहीं है। मेरे दिल में यह इतना ही निश्चित है जितना रात के बाद प्रभात का आना। लेकिन आइये, हम कोशिश करें कि वे स्वप्न हमारे जीवन-काल में ही पूर्ण हो जायं, हमें अगली पीढ़ी के लिये उन्हें छोड़ कर न जाना पड़े।

* बन्देमातरम् *

(२)

युवकों से !

युवकों का आदर्श है एक नये संसार का सृजन—अपने लिये और समस्त मनुष्य जाति के लिये। युवकों द्वारा चलाया हुआ हर एक आंदोलन युवक-आंदोलन नहीं है। असली युवक आंदोलन तो वह है जो आंतरिक जागृति से उत्पन्न और नवीन समाज की कल्पना से अनुप्राणित हो। युवकों का पहला कर्त्तव्य यह है कि वे 'अपने ही भीतर' के राज्य का स्वप्न लें और उसके बाद उसे सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन में कार्यान्वित करने का प्रयत्न करें। मुझे युवकों के कार्यों में विश्वास है, क्योंकि युवकों के सहवास में ही हमारे भीतर का सर्वोत्तम अभिव्यक्त होता है।

संसार में भारत का क्या मिशन है इसका हमें अभी पूर्ण रूप से ज्ञान नहीं है। मैं अपने युवक मित्रों को कहते सुनता हूं कि हमारे नेताओं ने हमारा गलत नेतृत्व किया है। यह तो युवकों का कर्त्तव्य है कि वे अपने चारों ओर दृष्टि डाल कर देखें कि दुनियां को किस चीज की जरूरत है और तब पुनर्निर्माण का कार्य अपने हाथ में लेकर दुनिया का नेतृत्व करें। अपने चारों ओर नजर दौड़ाइये, वर्तमान इटली का निर्माण किसने किया है ? मेजिनी तथा उसके स्वप्नद्रष्टा कुछ साथियों के स्वप्नों ने। जर्मनी, पर्शिया, चीन आदि देशों के भाग्यों का निर्माण कौन कर रहा है ? वही युवकों के स्वप्न। भारतवासी में जो एक सब से बड़ा दोष है वह यह कि वह पूरी तरह से आत्म-चैतन्य नहीं है।

आज भारत के सामने दो मिशन हैं (१) अपनी राजनीतिक, आर्थिक तथा सामाजिक समस्याओं का समाधान और (२) विश्व की सभ्यता के निर्माण तथा विश्व की समस्याओं के हल में हिस्सा बंटाना। इस मिशन को पूर्ण करने के लिये भारतीय युवकों को अपना प्राचीन इतिहास जानना होगा और भारत के ज्वलंत भविष्य का स्वप्न देखना होगा। साथ ही उन स्वप्नों को कार्य-परिणत करने और उन आदर्शों को सामाजिक जीवन में ढालने के लिये युवकों को अपने अन्दर उत्कट भावना पैदा करनी होगी।

मेरी दृष्टि में आज के प्रमुख आदर्श हैं राजनीतिक क्षेत्र में

स्वशासित राष्ट्रों का संघ और सांस्कृतिक क्षेत्र में विभिन्न संस्कृतियों का संघ। आज की विश्व की समस्या मनुष्यों का संघ कायम करना है लेकिन उस समस्या का हल तभी हो सकता है जब पहिले हमारी राष्ट्रीय समस्या का हल हो ले।

भारत की राष्ट्रीय समस्याओं के सफल समाधान के लिये भारतीय युवकों को मालूम होना चाहिये कि आधार रूप में भारतीय समाज एक है और भारतीय सभ्यता का प्रवाह अविच्छिन्न है। मेरी दृष्टि में तो भारतीय सभ्यता एक महा-नदी के सदृश है जो काल-तटों के बीच न जाने कब से प्रवाहित हो रही और बीच-बीच में जो विभिन्न संस्कृतियों की छोटी-बड़ी धाराओं के मेल से वृहदाकार होती जाती है। काश्मीर से कन्याकुमारी तक और बंगाल से गुजरात तक सभ्यता एक ही है। कुछ बाह्य विभिन्नतायें हो सकती हैं। हमारे इतिहास ने भी हमें यही बताया है कि उनमें भिन्नता है। लेकिन हमें उस इतिहास की बहुत सी बातों को भुला देना होगा जो हमें हमारे विदेशी इतिहासकारों ने पढ़ाया है। हमें अपने अतीत की तरफ दृष्टि फेर कर ऐसी ऐतिहासिक चेतनता जागृत करनी होगी जिससे हम अपनी सभ्यता की महत्ता तथा कला, दर्शन, धर्म और समाजशास्त्र में उसकी गौरवपूर्ण देन को अनुभव कर सकें। उसमें हिन्दू और मुसलमान का कोई भेद नहीं है। वह तो विभिन्न संस्कृतियों के मेल का फल है। चन्द्र-ज्योत्स्ना में ताज के दृश्य को देखो। वह मन कितना सुन्दर होगा, जिसने इसकी कल्पना की है। विश्वकवि

रवीन्द्रनाथ टैगौर ने उसे काल के कपाल पर पड़ा अश्रुबिन्दु लिखा है। यदि मुगल अपने पीछे सिवा ताज के और कुछ न छोड़ जाते तब भी मैं उनका कृतज्ञ होता। ब्रिटिश सरकार, जब उसका राज्य समाप्त होगा, अपने पीछे क्या छोड़ जायगी? सिर्फ तंग कोठरियों और डरावनी बैरकों वाली जेलें।

भारत का विशेष मिशन यही है कि वह विभिन्न दृष्टिकोणों और सभ्यताओं को मिला कर एक कर दे। यूरोप ने भी इसके हल की कोशिश की है, पर कैसे? इंगलैण्ड तथा अन्य देशों ने अफ्रीका और एशिया में क्या किया है? वहां की वे मूल जातियां कहां हैं जो यूरोप की सभ्यता के प्रभाव में आयी थीं? अमेरिका अपने हबशियों की समस्या कैसे हल कर रहा है? भारत उस मार्ग पर नहीं चला और उसने अपने ही ढंग से उनके हल का यत्न किया है। उसने वर्णाश्रम धर्म के द्वारा विभिन्न सम्प्रदायों को मिलाने की कोशिश की है। लेकिन आज अवस्थायें बदल गयी हैं। हमें उससे अधिक ऊंचे और वैज्ञानिक तरीके की आवश्यकता है। *

* २० मई, १९२८ में बम्बई में दिये एक भाषण के कुछ अंश!

(३)

सामयिक विचार

ता० २४ जनवरी १९३८ की शाम को, विदेश से आने पर कलकत्ते में पत्र-प्रतिनिधियों के सामने तात्कालिक समस्याओं पर आपने निम्नलिखित विचार प्रकट किये :—

कांग्रेस और संघ-शासन

संघ-शासन के प्रति कांग्रेस के रुख को बतलाते हुए आपने कहा कि व्यक्तिगत रूप से मेरी राय है कि वह (कांग्रेस असहयोग और अहिंसा के अन्तर्गत सभी सम्भव साधनों से संघ-योजना को रोकेगी। ब्रिटिश राजनीतिज्ञ भारत में शान्तिकाल चाहते हैं,

और वे किसी भी तरह संघ-शासन को अमल में आता देख कर सन्तुष्ट होंगे और समझेंगे कि भारत की समस्या एक बार सब के लिए हो गई। किन्तु मैंने इङ्गलैंड में अपने भाषणों, मुलाक़ातों और बातचीत में यह स्पष्ट कर दिया है कि पद-ग्रहण कर लेने से ही कांग्रेस संघ-शासन को स्वीकार न करेगी। सैद्धान्तिक रूप से मैं संघ का विरोध नहीं करता। क्योंकि मेरा विश्वास है कि भारत का शासन-विधान अन्त में एक संघात्मक प्रजातन्त्र ही होगा। परन्तु मैं १९३५ के भारत सरकार के एक्ट में प्रस्तावित संघ का विरोध करता हूं।

मन्त्रि-मण्डलों के कार्य

कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलों के कार्यों के बारे में ब्रिटिश जनता की राय बताते हुए श्री बोस ने कहा कि उनके कार्यों और रुख से ब्रिटिश जनता सन्तुष्ट है। वह ख़याल नहीं करती कि मन्त्रि-मण्डलों और गवर्नरों में मतभेद हो जायगा। पर मेरा ख़याल है कि यह मतभेद किसी भी क्षण खड़ा हो सकता है। निस्सन्देह कांग्रेस मन्त्रि-मण्डल तभी तक पदों पर आरूढ़ रहेंगे, जब तक वे देखेंगे कि इससे देश-कल्याण का ठोस कार्य किया जा रहा है। इसमें कोई सार नहीं है कि कांग्रेसी मन्त्रि-मण्डल भी धीरे-धीरे चाकरशाही से प्रभावित हो जायेंगे।

नज़रबन्दों की समस्या

नज़रबन्दों की समस्या के बारे में बंगाल सरकार के रुख पर

आपने कहा कि यद्यपि मुझे हर्ष है कि सरकार ने नजरबन्दों की रिहाई के बारे में कुछ क़दम उठाये हैं, किन्तु जनता की आशा से अभी बहुत ही कम किया है। निश्चय ही हम न केवल नजरबन्द बल्कि सभी राजबन्दियों की रिहाई के बारे में आन्दोलन करते रहेंगे।

भावी महासमर

यूरोप की राजनीति, विशेषतः भावी संसार-समर के बारे में आपने कहा कि एक साल पूर्व की अपेक्षा इस समय यूरोप में निकट भविष्य में युद्ध होने की कम ही सम्भावना है। इसके दो कारण हैं एक तो स्पेन के गृह-युद्ध ने आधुनिक लड़ाई के आतंक और भय द्वारा सब राष्ट्रों की आंखें खोल दी हैं। यद्यपि हर एक राष्ट्र युद्ध की तैयारियां कर रहा है, किन्तु कोई भी लड़ाई को तैयार नहीं है। जर्मनी का वर्तमान रुख पहिले की अपेक्षा अधिक बाहोश और ठीक है। क्योंकि उसकी धारणा है कि पूर्वीय और केन्द्रीय यूरोप में उसका स्वतंत्र हाथ न हो सकेगा। मेरी राय में यदि यूरोप में लड़ाई भी आरम्भ हुई तो पहिले वह केन्द्रीय यूरोप में होगी, जो बाद को पूर्व और अन्त में पश्चिम तक फैल जायगी। गत वर्ष की अपेक्षा यूरोप केन्द्रीय निवासी इस बार शांति होने में अधिक विश्वास रख रहे हैं। इन सब बातों से प्रकट होता है कि यूरोप में शीघ्र ही किसी युद्ध के छिड़ने का खतरा नहीं है।

विदेशियों का रुख

भारतीय मामलों के बारे में ब्रिटेन के लोगों के रुख को बतलाते हुये आप ने कहा कि वहां की जनता में भारत सम्बन्धी मामलों के बारे में भारी अज्ञान है तो भी मैं भारत के स्वातन्त्र्य-युद्ध मे सहानुभूति और दिलचस्पी रखने वाले लोगों से मिला। पर मुझे यह नहीं मालूम हुआ कि ये लोग शासक श्रेणी पर कुछ अधिक प्रभाव रखते हैं। वहां के प्रख्यात राजनीतिज्ञ भी भारतीय मामलों के बारे में जानकार नहीं हैं। उनको जो कुछ सूचनायें मिलती हैं वे या तो सरकारी सूत्रों से प्राप्त होती हैं, या भारत-स्थित ब्रिटिश-पत्रों के सम्वाददाताओं से, जो कि वास्तविक स्थिति को कभी ठीक नहीं रखा करते।

श्री बोस ने इटली और जर्मनी का भारत के प्रति क्या रवैया है, यह बताते हुये पत्र-प्रतिनिधि को कहा कि करांची की यह खबर झूठी है कि मैंने कहा था कि जर्मन और इटालियन भारत के विरुद्ध गन्दा प्रचार कर रहे हैं। मैंने ऐसी कोई बात नहीं कही। इटालियनों द्वारा भारत के खिलाफ प्रचार की बात मैंने कभी नहीं सुनी। जर्मनी में पहले भारत के विरुद्ध प्रचार अवश्य होता रहा है, लेकिन अभी हाल में जर्मनी के भारतीयों से जब मैं मिला तो उन्होंने बताया कि जर्मनी के भारत के प्रति रवैये में पहले से सुधार है।

सुदूरपूर्व की स्थिति और यूरोपियन राष्ट्रों के रुख का जिक्र

करते हुये आपने कहा कि इंगलैंड और फ्रांस स्वभावतः चीन का साथ देंगे और इटली तथा जर्मनी जापान का। इस बातचीत के अन्त में आयर्लैण्ड के कर्णधार डीवेलरा के प्रति आपने हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित की जो कि भारत के कार्यों के प्रति सहानुभूति रखते हैं।

* शुभम् *